ISSN : 2456-8856

पंजीयन संख्या RNI No.: MPHIN/2002/09510 डाक पंजीकृत क्रमांक मालवा डिवीजन/204/2024-2026 उज्जैन (म.प्र.)

UGC Care Listed and Peer Reviewed Referred Bilingual Monthly International Research Journal

प्रेषण दिनांक 30 पृष्ठ संख्या 28

आश्वस्त

वर्ष 27, अंक 254 दिसम्बर 2024

शत-शत नमन

संपादक – डॉ. तारा परमार

भारती दलित साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश, उज्जैन की अन्तर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका

वर्ष : 27 अंक 254
दिसम्बर 2024

आश्वस्त

(सन् 1983 से निरंतर प्रकाशित)

RNI No.: MPHIN/2002/09510
ISSN : 2456-8856

भारती दलित साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश, उज्जैन (पंजीयन क्रमांक 2327 दिनांक 13/05/1999) की मासिक पत्रिका

संस्थापक सम्पादक
डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी

संरक्षक
सेवाराम खाण्डेगर
11/3, अलखनन्दा नगर, बिड़ला हॉस्पिटल के पीछे,
उज्जैन मो.: 98269-37400

परामर्श
आयु. सूरज डामोर IAS
पूर्व सचिव-लोक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण वि.
म.प्र.शासन, भोपाल मो. 094253-16830

सम्पादक
डॉ. तारा परमार
9-बी, इन्द्रपुरी, सेठी नगर, उज्जैन-456010
मो. 94248-92775

सम्पादक मण्डल :
डॉ. जयप्रकाश कर्दम, दिल्ली
डॉ. खन्नाप्रसाद अमीन, गुजरात
डॉ. जसवंत भाई पण्ड्या, गुजरात
डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा, म.प्र.

Peer Review Committee
डॉ. श्रवणकुमार मेघ, जोधपुर(राजस्थान)
प्रो. दत्तात्रय मुरुमकर, मुंबई (महाराष्ट्र)
प्रो. रश्मि श्रीवास्तव, उज्जैन (म.प्र.)
डॉ. बी.ए.सावंत, सांगली (महाराष्ट्र)

कानूनी सलाहकार
श्री खालीक मन्सूरी एडव्होकेट, उज्जैन

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1	अपनी बात	डॉ. तारा परमार	3
2	लोक संस्कृति और इतिहास लेखन के संदर्भ में मारवाड़ी, (पश्चिमी राजस्थानी) लोक गीतों का अध्ययन	डॉ. ईश्वर दान	4
3	मानवीयता और अस्पृश्यता का द्वन्द्व : सुजाता	डॉ. राजेश कुमार	6
4	बौद्ध दर्शन और हिन्दी दलित कविता	डॉ. राहुल सिद्धार्थ	8
5	Sugamya Bharat Abhiyan : A meaningful initiative for the differently abled	Dr. Santosh Patidar	11
6	Bonding Beyond Trauma : A Study on Vendela Vida's The Lovers	Akila, Research Scholar of English; Dr. S. Ramya Niranjani, Associate Professor of English	14
7	आजादी में प्रवंचित वर्ग की सहभागिता और आपराधिक अधिनियम	डॉ. धर्मवीर यादव	18
8	योग द्वारा तनाव प्रबंधन	डॉ. मीरा त्यागी	20
9	अस्थियों के अक्षर : मर्यादाओं से अपराधीकरण तक का सफर	डॉ. गोपाल जीनगर	23
10	थारू जनजातीय युवा पीढ़ी में बदलते मूल्यों का समाज शास्त्रीय अध्ययन	प्रो. मंजु सिंह, मीनाक्षी सिंह (शोध छात्रा)	25

UGC Care Listed Journal
खाते का नाम - आश्वस्त (Ashwast)
खाते का नं.- 63040357829
बैंक - भारतीय स्टेट बैंक,
शाखा- फ्रीगंज, उज्जैन (Freeganj, Ujjain)
IFS Code - SBIN0030108

Web : www.aashwastujjain.com
E-mail : aashwastbdsamp@gmail.com

एक प्रति का मूल्य	:	रुपये 20/-
वार्षिक सदस्यता शुल्क	:	रुपये 200/-
आजीवन सदस्यता शुल्क	:	रुपये 2,000/-
संरक्षक सदस्यता शुल्क	:	रुपये 20,000/-

विशेष : सम्पादन, प्रकाशन एवं प्रबंध अवैतनिक तथा पत्रिका में प्रकाशित विचारों से सम्पादक-मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। विवाद की स्थिति में न्यायालय क्षेत्र उज्जैन रहेंगा।

अपनी बात

10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ की जनरल असेम्बली ने मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा को स्वीकृत और घोषित किया। इस ऐतिहासिक कार्य के बाद ही असेम्बली ने सभी सदस्य देशों से अपने यहाँ इन अधिकारों को स्वीकृत और लागू करने का अनुरोध किया। उसी समय से प्रत्येक वर्ष 10 दिसम्बर को **मानव अधिकार दिवस** के रूप में मनाया जाता है।

भारतीय संविधान मानव अधिकारों को ग्रहण करता है, उसकी पुष्टि करता है तथा उसका नियमन अनुच्छेद 1 से लगायत 30 तक के अनुच्छेद में करता है।

बाबासाहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर की दृष्टि अत्यंत विशाल थी, उनकी दृष्टि मानवतावादी थी। उन्होंने जातीयता की विघटनकारी प्रवृत्ति पर गौर करके उससे उत्पन्न समस्याओं का विश्लेषण किया। वे कहते है–''हम जाति की कमजोर नींव पर मानव जाति के विकास की इमारत खड़ी नहीं कर सकते है और न ही राष्ट्र का निर्माण। नैतिक मूल्यों की सुरक्षा भी नहीं कर सकते यानी जातियता की नींव पर जो विकास की इमारत खड़ी होगी वह शाश्वत नहीं होगी, उसमें एकता का अभाव होगा जो कभी भी गिर सकती है, लेकिन भारतीय समाज ने उनकी मानवतावादी दृष्टि को नहीं अपनाया।

उनका प्रयास दलितों के साथ–साथ संपूर्ण भारतीय समाज को एक प्रगतिशील, न्यायपूर्ण और सम्मुनत समाज बनाने का था। उनकी दृष्टि में मूल प्रश्न मानव–मानव के बीच अच्छे व शुभ संबंध विकसित करने का था। डॉ. अम्बेडकर का मानवतावाद वह विचारधारा है जो मनुष्य को समस्त बनावटी और अनावश्यक सामाजिक बंधनों तथा कठोर नियमों से मुक्त करने के लिये संकल्पित है। वह समतावादी समाज और समान अधिकारों का सशक्त समर्थक है।

दो हाथ एवं दो पैर वाला आकार होने मात्र से ही कोई मानव नहीं हो जाता। यह आकार तो एक आकृति विशेष है और यह आकृति विशेष तभी मानव पद को प्राणोज्जवल कर सकती है जब उसमें मानवता (मानवीय मूल्यों) का सहजतया सदैव सन्निवेश हो। समभाव एवं सद्भाव में ही मानव की महानता विद्यमान होती है। समत्व ही मानवत्व, शुभत्व की साधना तथा सिद्धि का मुख्याधार है।

डॉ. अम्बेडकर का मानना है कि मानवाधिकारों की सुरक्षा कानून द्वारा तो होती ही है, लेकिन उससे पहले समाज की सामाजिक एवं नैतिक भावना द्वारा हुआ करती है, क्योंकि जब सामाजिक भावना कानून द्वारा प्रदान अधिकारों को मान्यता देने के लिये तैयार होती है तो अधिकार सुरक्षित हो जाते हैं, किन्तु देखने में यह आता है कि अनेक बार समाज मूलाधिकारों का विरोधी हो जाता है, तब न्यायपालिका को स्वतः संज्ञान लेते हुए व्यक्ति के अधिकार की रक्षा करनी पड़ती है या व्यक्ति के अधिकारों का हनन होने से रोकना पड़ता है।

इतिहास साक्षी है कि समाज के सभी वर्गों के विकास के बिना राष्ट्र के विकास की संकल्पना बेमानी है इसलिये सभी वर्गों को सशक्त बनाना आवश्यक है। राज्य के आवश्यक तत्वों में से एक महत्वपूर्ण तत्व जनसंख्या है यानि उस देश के नागरिक या मानव और सशक्तिकरण का अर्थ एक शख्स के रूप में अपने जीवन पर स्वयं के नियंत्रण से है और सामाजिक सशक्तिकरण से तात्पर्य समाज के सभी तबकों के लिये अपने जीवन पर एक समान नियंत्रण और महत्वपूर्ण निर्णय लेने के लिए अवसर की समानता व उपलब्धता है।

किसी भी देश के विकास के लिये पहली और सबसे जरूरी शर्त है कि समाज के सभी वर्गों का एक समान विकास हो। ऐसा तभी संभव है जब एक समान विकास का अवसर सुनिश्चित करने के लिये विभिन्न योजनाओं और नीतियों का एक–दूसरे के साथ समन्वय हो।

– डॉ. तारा परमार

लोक संस्कृति और इतिहास लेखनके संदर्भ में मारवाड़ी (पश्चिमी राजस्थानी) लोक गीतों का अध्ययन

– डॉ. ईश्वर दान

शोध सार : राजस्थान की संस्कृति का मूल ग्रामीण परिवेश रहा है और यहां की आत्मा लोक में ही बसती है। राजस्थान के लोक गीत संस्कृति के परिचायक हैं, ये लोकगीत तीज–त्यौहार से लेकर विभिन्न पारिवारिक सरोकारों, उत्सवों आदि अवसरों पर गाये जाते हैं। ये लोकगीत राजस्थान के रीति–रिवाज, परम्परा, वेशभूषा, खान–पान, पर्व–उत्सव, लोक–दर्पण आदि विविध पक्षों को उद्घाटित करते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक स्रोतों पर आधारित हैं तथा इस आलेख में लोक तथा लोक गीतों को परिभाषित करते हुए मारवाड़ी लोकगीतों में अभिव्यक्त जीवन के विविध स्वरूपों यथा प्रकृति चित्रण का सूक्ष्म विश्लेषण किया गया है। अतः इन लोक गीतों की सार्थकता केवल भाव सौंदर्य या मनोरंजन तक ही नहीं बल्कि लोकप्रिय संस्कृति को समझने और सामाजिक–सांस्कृतिक इतिहास लेखन के प्रमुख स्रोत के रूप में भी हैं।

बीज शब्द : लोक संस्कृति, लोक गीत, समाज, प्रकृति चित्रण।

मूल आलेख :

लोक से तात्पर्य

"लोक" शब्द एक बहुत प्राचीन शब्द है 'लोक' शब्द का अर्थ उस जन समाज से लगाया जा सकता है जो गहराई से पृथ्वी पर फैला रहता है इस लोक शब्द में सभी जन समुदाय शामिल होते हैं। वर्तमान समय में जब हम "लोक" शब्द का प्रयोग करते हैं तो एक महत्वपूर्ण जन समुदाय की ओर संकेत करता है। ये जनसाधारण गांवों से लेकर नगरों तक फैला हुआ है, जो सहज और साधारण जीवन व्यतीत करता है।

साहित्यकार रवींद्र भ्रमर लोक शब्द को परिभाषित करते हुए लोक शब्द के दो अर्थों की ओर संकेत करते हैं "एक तो विश्व अथवा समाज और दूसरा जनसामान्य या जनसाधारण। साहित्य अथवा संस्कृति के एक विशिष्ट भेद की ओर इंगित करने वाले एक आधुनिक विशेषण के रूप में इस शब्द का अर्थ ग्राम्य या जनपदीय समझा जाता है, किन्तु इस दृष्टि से केवल गाँवों में ही नहीं, वरन् नगरों, जंगलों, पहाड़ों और टापुओं में बसा हुआ वह मानव समाज जो अपने परम्परा – प्रथित रीति–रिवाजों और आदिम विश्वासों के प्रति आस्थाशील होने के कारण अशिक्षित एवं अल्प सभ्य कहा जाता है, 'लोक' का प्रतिनिधित्व करता है।[i] आमतौर पर, लोक संगीत, लोक साहित्य की तरह, मौखिक परंपरा में रहता है इसे पढ़ने के बजाय सुनकर सीखा जाता है। लोक परंपराएं सामाजिक जीवन के सबसे सांस्कृतिक रूप से अद्वितीय तथ्यों में से एक हैं।[ii]

लोक गीत उस लोक की संस्कृति से अभिन्न रूप से जुड़े हुए होते हैं। लोक गीतों पर किसी सभ्यता और संस्कृति का आवरण नहीं होता। लोक गीतों के माध्यम से हम उस लोक के समाज को समझ सकते हैं। लोक गीत तो सहज सरल लोगों के मन से निकले हुए ऐसे स्वर, शब्द और ताल हैं, जिनका त्रिवेणी संगम लोगों के जीवन में हर्ष और आनंद उत्पन्न कर देते हैं। लोक साहित्य के विद्वान् मदनलाल शर्मा कहते हैं कि "जब रससिक्त स्वतः स्फूर्ण से उद्भूत होते हैं तो लोक गीतों का जन्म होता है।[iii]

राजस्थान में एक कहावत प्रचलित है 'गीतड़ा कै भींतडा' पश्चिमी राजस्थान की इस कहावत से तात्पर्य

है कि मनुष्य के यश को उनकी स्मृति में बनाई गई ईमारत से याद रखा जाता है या उनके यशोगान में रचा हुआ काव्य उनकी कीर्ति को सदियों तक याद रखा जाता है। राजस्थानी लोकगीतों के शोध अध्येता किरणचंद नाहटा लिखते हैं "मध्यकालीन राजस्थानी समाज की इतिहास चेतना जागृत और सराहनीय रही है। उस काल में यहां इतिहास विषयक अनेक ग्रन्थ तैयार हुए। अपने समय के इतिहास को लिपिबद्ध करने के साथ ही उन्हें सुरक्षित करने और संरक्षित रखने के अनेक उपक्रम किए गए। इतना ही नहीं श्रुति परंपरा में भी इतिहास से जुड़े हुए प्रसंगों को समाज ने सैकड़ों वर्षों तक स्मृति में जीवित रखा।"[iv]

पश्चिमी राजस्थान की संस्कृति और लोक गीत :

राजस्थान के मारवाड़ प्रदेश (पश्चिमी राजस्थान, जिसमें मुख्यतः बाड़मेर, जैसलमेर, जोधपुर और जालोर जिलों को शामिल किया गया है) के लोक गीतों को संस्कृति के संदर्भ में विभिन्न आयाम में देख सकते हैं। यहां के लोक गीतों में नारी के सौंदर्य से लेकर समाज उसकी स्थिति, शिशु के जन्म तथा मृत्यु पर शोक गीतों के माध्यम से यहां की संस्कृति को अधिक नजदीक से जान सकते हैं। यहां के गीतों में प्रकृति की मनोहारी छठा सुंदर वर्णन मिलता है जिसमें वर्ष के बारह महीनों तथा ऋतुओं को लोक गीतों के माध्यम से जान सकते हैं।

प्रकृति चित्रण और लोक गीत : राजस्थानी लोक गीतों में प्रकृति को अत्यंत नजदीक से देख सकते हैं यहां के लोक गीतों में प्रकृति का अत्यंत सुंदर वर्णन हुआ है। यहां के लोक गीतों में बादल बरसात, वनस्पति और खेत आदि का वर्णन है। जैसलमेर के सांवता गांव का अनुभव है। पौ फटने के साथ ही यहां लोग सक्रिय होने लगे। शायद धूप के आने के पहले ही दिनचर्या की जरूरी चीजें निपटाने का दबाव था। पारंपरिक लिबास में महिलाओं का एक समूह पास के टांके पर पानी भरने गया। यहां के पारंपरिक लिबास में घाघरा, चोली और ओढनी शामिल है। कुछ ही देर में एक महिला के गाने की आवाज आई। पानी भरते हुए वह महिला गा रही थी। इनका नाम उमादे कंवर है और इनके गाने के बोल कुछ ऐसे थे–

"बरसो बरसो ओ इन्दर राजा बाबोसा रे देस थोड़ा तो बरसो ओ म्हारे सासरे

हळियो हंके ओ बीरा म्हारा मगरा में जाय बा'इजो ओ बीरा म्हारा लीलोड़ी जंवार

धोरा में बा'इजो ओ मीठो बाजरो"

थार में मॉनसून आने की सूचना मांगणियार समुदाय के लोकगायक इशाक खान "आज रे उत्तरी में हांजी धूंधलो रे, बरसे मोंजे जैसोणे रो मेह" लोकगीत गाकर देते हैं। सियालो, बरसालो, बायरियो, केसरियो हजारी गुल रो फूल, चिरमी आदि प्रकृति के साथ अपनी सहसंबंधता को प्रस्तुत करते है। चिरमी एक पौधा होता जिसका फल लाल रंग का होता है उसको लेकर गीत के बोल कुछ इस प्रकार है :–

'चिरमी बाबोसा रै लाडकी, मांजै चिरमकी रा डाळा दोय–चार, वारी जाऊं चिरमी नौं'

बायरियो गीत के बोल कुछ इस प्रकार है :–

सैणा रा बायारियां धीमो रे मदरो बाज, जिण रे दिसा में म्हारा पिउ जी बसे है,

उण री दिसा सूं आवैं ठंडळक हीळ।

निष्कर्ष :

ये सभी लोकगीत राजस्थान की लोक संस्कृति को प्रदर्शित करते हैं। इस प्रकार राजस्थान के लोकगीतों में लोक संस्कृति की पूर्णता को देखा जा सकता है। इन गीतों में यहाँ की सभ्यता–संस्कृति एवं संस्कार झलकते हैं। यहाँ के लोकगीतों में लोक संगीत के महत्वपूर्ण अंग

होते हैं इन लोकगीतों में माधुर्य के साथ साथ वातावरण निर्माण एवं भावाभिव्यक्ति को प्रभावशाली बनाने की शक्ति होती है। अतः राजस्थान के लोकगीत यहाँ के परिवेश स्थिति व भावों के अनुरूप ढलकर राजस्थान की लोक संस्कृति का महत्व बढ़ाते हैं । लोक संगीत ही परिष्कृत होकर कालक्रम से शास्त्रीय संगीत के रूप में परिणित हुआ। यहाँ के लोक गीतों में सौन्दर्य है, कला है, मंगल है, माधुर्य है और अपनत्व है। लोक गीतों में लोक–जीवन की स्पष्ट व्याख्या है। लोकगीतों में हमारी पहचान व हमारा स्वत्व छिपा हुआ है। अपने स्वत्व व निजता से दूर होना किसी भी व्यक्ति व समाज के लिए आत्मघाती होता है। गीतों की जीवंत विरासत, हालांकि अमूर्त है, किसी देश के सांस्कृतिक क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण पहलू है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि लोकगीतों में मानव की सभी प्रकार की भावनाओं, हर्ष उल्लास शोक–विषाद, प्रेम–ईर्ष्या भय–आशंका, घृणा, ग्लानि, आश्चर्य, विस्मय, भक्ति, निवृत्ति आदि का सरल रूपों में दर्शन होता है।

– डॉ. ईश्वर दान
सहायक आचार्य
इतिहास विभाग, सत्यवती कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय
मो. 98189 71955

संदर्भ :

i रवींद्र भ्रमर, हिंदी भक्ति – साहित्य में लोक तत्त्व, भारती साहित्य मंदिर, 1965, पृ. सं. 3–7

ii John Greenway, "Folk Songs as Socio-Historical Documents", Western Folklore, Vol- 19, No- 1 (Jan, 1960), pp- 1–9

iii मदन लाल शर्मा, राजस्थानी लोक गीतों का सांस्कृतिक अध्ययन, पृ. सं. 28

iv सूर्यकरण पारीक, राजस्थानी लोकगीत, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1999, पृ. 18, बाबूलाल शर्मा, राजस्थानी लोकगीत, पृ सं 5,

मानवीयता और अस्पृश्यता का द्वन्द्व : सुजाता

– डॉ. राजेश कुमार

शोध–सार :– हिंदी सिनेमा ने आरंभ से ही सामाजिक समस्याओं को अपने कथानक में पिरोया है। अस्पृश्यता भी भारतीय समाज की एक प्रमुख समस्या रही है। 'चंडीदास' (1934), 'अछूत कन्या' (1936) और 'अछूत' (1940) के बाद 'सुजाता' (1959) अस्पृश्यता की समस्या को प्रभावी ढंग से चित्रित करनेवाली महत्वपूर्ण फिल्म है। बिमल राय द्वारा निर्देशित यह फिल्म एक अछूत लड़की के माध्यम से मानवीयता और अस्पृश्यता के द्वंद्व का मार्मिक चित्रण करती है।

बीज–शब्द :– सिनेमा, अस्पृश्यता, हीनता–बोध, मानवीयता, रूढ़िवादी मानसिकता, हृदय परिवर्तन।

मूल आलेख :– भारतीय समाज में व्याप्त अन्य समस्याओं के साथ अस्पृश्यता की समस्या को भी हिंदी सिनेमा ने अपने शैशव काल से ही दर्शाना आरंभ कर दिया था। इस पर बनी पहली महत्वपूर्ण फिल्म 'चंडीदास' (1934) थी। इसमें वर्णभेद, सामाजिक बंधन एवं धर्मांधता को लांघकर दलित धोबिन और ठाकुर पुरोहित का मिलन दिखाया गया था। फिल्म 'अछूत कन्या' (1936) में भी छुआछूत के अमानवीय कृत्य को बड़ी तीव्रता से उकेर कर उसकी भर्त्सना की गई थी। "यह उस समय आसान बात नहीं थी । यह बीसवीं सदी का पूर्वार्द्ध था और राष्ट्र इस समस्या से गहराई तक ग्रस्त था।"[1] सन् 1940 में प्रदर्शित 'अछूत' भी एक परिवर्तनकामी फिल्म थी। 'अछूत कन्या' की भांति इसमें भी उच्च जाति एवं निम्न जाति के नायक–नायिका का प्रेम, संघर्ष एवं बलिदान चित्रित है। सुबोध घोष की लघु कथा पर आधारित एवं बिमल रॉय निर्देशित 'सुजाता' (1959) इसी सामाजिक बुराई के प्रति अस्वीकार को दर्शाती है। जितेंद्र बिसारिया इसे पूर्व की दो फिल्मों 'अछूत कन्या' और 'अछूत' का ही परिष्कृत रूप मानते हैं।[2]

सुजाता एक कुलीन ब्राह्मण उपेंद्र नारायण चौधरी उर्फ उपेन के एक अछूत कामगार की बेटी है। उसका

जन्म होते ही उसके माँ–बाप हैजे से मर गए। अपने परिवार में एक अछूत लड़की को रखने के कारण चौधरी दम्पत्ति को समाज से कई प्रकार की बातें सुननी पड़तीं, इसीलिए वे उसे उसकी जाति के किसी व्यक्ति को दे देना चाहते हैं। परंतु उन्हें कोई उपयुक्त व्यक्ति नहीं मिलता। कुछ बड़ी हो जाने पर वे मोह–ममतावश उसे अनाथालय भी नहीं भेज पाते। सुजाता के प्रति उपेन दम्पत्ति ममत्व का व्यवहार करता है, उसे अपने परिवार का अंग मानता हैं, परंतु सामाजिक बहिष्कार के भय से उसे पूरी तरह से अपनी बेटी नहीं बना पाता। "लेकिन यहाँ एक और विरोधाभास दिखाई देता है–मॉ यानी चारु लड़की को कभी नहीं छूती और अपने पति को हमेशा अछूत लड़की से बात करने पर घुड़कती है। अजीब बात यह है कि इसी समय वह अपनी बेटी रमा को सुजाता के साथ खेलने की अनुमति देती है।"[3] सुजाता घर में उपेक्षित है, न वह स्कूल जाती है, न उसका जन्मदिन मनता है। उसका परिचय (विशेषकर उपेन की पत्नी द्वारा) अपनी बेटी न कहकर 'बेटी जैसी' कहकर दिया जाता है। यह परिचय सुजाता के मन को कचोटता है। वह अम्मी के मुख से 'बेटी' शब्द सुनने के लिए तरसती है। "सुजाता के चेहरे का भाव और उसकी आँखों से ढलते आँसू उसके हृदय की समस्त पीड़ा, उसे मिली उपेक्षा, उसकी बेबसी सब निःशब्द बयां कर देते हैं।"[4] एक अछूत के रूप में सुजाता की यह उपेक्षा निर्देशक फिल्म की कास्टिंग में ही प्रतीकात्मक रूप से दर्शा देते हैं। "फिल्म की कास्टिंग एक फूल के इर्द–गिर्द होती है, एक ऐसा फूल जिस पर किसी का ध्यान न जाए...यह एक जंगली फूल है।'[5]

कहानी में अंतरसंघर्ष की परिणति तब होती है जब उपेन की बेटी को देखने आया नायक 'अधीर' सुजाता को चाहने लगता है। वह अपनी रूढ़िवादी नानी की इच्छा के विरुद्ध सुजाता से विवाह करने का निश्चय करता है। कहानी के क्लाइमेक्स में जब सुजाता अपनी 'अम्मी' को अपना रक्त देकर बचाती है तो अम्मी का हृदय परिवर्तन हो जाता है और वह उसे अपनी बेटी बनाकर अधीर से उसका विवाह करा देती है।

यह फिल्म समाज में अछूतों के प्रति होने वाले व्यवहार से सीधे साक्षात्कार करते हुए उनके प्रति सामाजिक दृष्टिकोण व पूर्वाग्रहों को दर्शाती है। रमा के कॉलेज में दिखाए जानेवाली नृत्य–नाटिका 'चांडालिका' के माध्यम से ऐसे लोगों पर व्यंग्य किया गया है जिनके लिए अछूतोद्धार केवल एक प्रचार वाक्य है। वस्तुतः फिल्म के सभी पात्र प्रतिनिधि पात्र हैं। उपेन बाबू उस अभिजात्य वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं जो विचारों से आदर्शवादी हैं। वे इन आदर्शों को व्यवहार में उतरना भी चाहते हैं परंतु सामाजिक मर्यादाओं के आगे विवश हैं। नायक अधीर उस शिक्षित युवावर्ग का प्रतिनिधि है जो अस्पृश्यता की संकीर्ण अवधारणा एवं पूर्वाग्रह से पूर्णतः मुक्त है तथा इसे मिटाने के लिए आगे आता है। उपेन की बेटी रमा भी इसी नई पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करती है जो अस्पृश्यता की भावना से परे है। वह सुजाता को अपनी बड़ी बहन मानती है तथा उससे अत्यंत प्रेम करती है। अधीर की नानी उस उच्चवर्णीय रूढ़िवादी मानसिकता का प्रतिनिधित्व करती है, जिसके कारण वे अछूत कहे जानेवाले लोगों की छाया से भी दूर रहते हैं।

'सुजाता' स्वतंत्रता के बाद बनी पहली महत्वपूर्ण फिल्म थी जिसमें अस्पृश्यता की समस्या को अत्यंत सशक्त ढंग से उठाया गया था। "उस समय तक लोगों में असंतोष पनपना आरंभ नहीं हुआ था। लोगों के मन में आशा थी कि सामाजिक न्याय मिलेगा। शायद इसीलिए निर्देशक सुजाता से कहीं भी विद्रोह नहीं करवाता है। एक और बात है सुजाता को वे लोग प्यार करते थे और वह स्वावलंबी नहीं थी, उन लोगों पर आश्रित थी इसलिए भी विद्रोह का सवाल नहीं उठता है। वह विद्रोह न करके गांधी की शरण में जाती है।[6] उदास, अकेली और मन से दुखी सुजाता को गांधी से प्रेरणा व आत्मबल मिलता है। दलित विमर्श की दृष्टि से 'सुजाता' की समीक्षा करते जितेंद्र बिसारिया लिखते हैं, "फिल्म 'सुजाता' की महानता सुजाता के रूप में नूतन का अभिनय है, जिन्होंने दलित होने की हीनग्रंथि से पीड़ित युवती के चरित्र को इस तरह जिया है कि वह हिन्दी सिनेमा की अमर कृति बन गई है। परिवार की सहमति से अन्तर्जातीय विवाह होना भी इस फिल्म का एक प्लस प्वाइन्ट कहा जा सकता है।"[7] इस फिल्म में अस्पृश्यता की समस्या को अत्यंत सुधारवादी एवं प्रभावी

ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

निष्कर्ष :– स्पष्ट है कि 'सुजाता' अछूत समस्या पर बनी एक अत्यंत संवेदनशील फिल्म है। इसमें कुलीनता, मानवीयता और अस्पृश्यता का संघर्ष आद्योपांत चलता है। यह दिखाती है कि व्यक्ति का व्यवहार ही उसे ऊंचा या नीचा बनाता है। वस्तुतः "सुजाता मानवीयता की पक्षधरता की फिल्म है। ऐसी फिल्में कभी पुरानी नहीं पड़ती हैं, कभी अपनी अर्थवता नहीं खोती है।[8] फिल्म अत्यंत सशक्त ढंग से अस्पृश्यता पर मानवीयता को प्रतिष्ठित करती है।

– डॉ. राजेश कुमार
सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, रोहतक
डाक का पता :
डॉ. राजेश कुमार सुपुत्र श्री जय नारायण
गांव व डाकघर : डीघल, पान्ना : कौशिक नगर
जिला–झज्जर (हरियाणा) पिन. 124107
मोबाइल 9896321474.

संदर्भ :

1. प्रमोद भारद्वाज, 'सदी का विवादास्पद सिनेमा' दैनिक भास्कर, नवरंग, 18 दिसंबर 1999, पृ. सं. 2.
2. जितेंद्र बिसारिया, 'हिंदी सिनेमा में प्रतिरोध की संस्कृति : दलित और हाशिए का समाज', संक. – हिंदी सिनेमा : बिम्ब प्रतिबिंब, संपा. – महेंद्र प्रजापति, शिल्पायन प्रकाशन नई दिल्ली, सं. 2015, पृ. सं. 57.
3. तत्याना षुर्लेई, 'समाज के हाशिए का सिनेमाई हाशिया', संक. – हिंदी सिनेमा के सौ साल (हंस – सिनेमा विशेषांक), संपा. – राजेंद्र यादव, अक्षर प्रकाशन प्रा. लि. नई दिल्ली, प्र.सं. 2023, पृ. सं. 163.
4. विजय शर्मा, 'सेल्यूलाइड पर रची कविता', संक.– हिंदी सिनेमा : बीसवीं से इक्कीसवीं सदी तक, संपा. – प्रह्लाद अग्रवाल, साहित्य भंडार इलाहाबाद, सं. 2013, पृ. सं. 186.
5. उपर्युक्त, पृ. सं. 186.
6. उपर्युक्त, पृ. सं. 190.
7. जितेंद्र बिसारिया, 'हिंदी सिनेमा में प्रतिरोध की संस्कृति : दलित और हाशिए का समाज', पृ. सं. 58.
8. विजय शर्मा, 'सेल्यूलाइड पर रची कविता', पृ. सं. 190.

बौद्ध दर्शन और हिन्दी दलित कविता

– डॉ. राहुल सिद्धार्थ

प्रस्तावना : हिंदी साहित्य को विविध कालखंडों में भारत की भिन्न–भिन्न दार्शनिक परम्पराओं ने प्रभावित किया है। हिंदी साहित्य के आदिकाल पर बौद्ध एवं नाथों की परम्परा के साथ जैन दर्शन का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। भक्तिकाल में आचार्य शंकर, रामानुजाचार्य, रामानंद, सूफी संत कबीर, सूरदास आदि के दार्शनिक परम्पराओं का प्रभाव भी हिंदी साहित्य के लेखन को प्रभावित करता है। आधुनिक काल में आकर हिंदी साहित्य पर बौद्ध दर्शन का प्रभाव भी व्यापक रूप से परिलक्षित होता है। इसी काल खंड में दलित साहित्य एक विशिष्ट साहित्य के तौर पर पाठक के समक्ष परस्तुत होता है। दलित साहित्य पर मूलतः प्रभाव बौद्ध दर्शन का देखा जाता है। इसी परम्परा में हिंदी साहित्य की दलित कविता को भी बौद्ध दर्शन ने प्रभावित किया है। यह दर्शन सामाजिक जातिगत व्यवस्था का विरोध करता है, अवतारवाद का खंडन करता है एवं समानता के आधार पर समाज को देखने का आग्रह करता है। बौद्ध दर्शन करुणा को महत्व देता है। समाज में व्याप्त विषमताओं को हिंदी दलित कविता करुणा के आधार पर व्याख्यायित करता है। इस शोध पत्र में हिंदी दलित कविता पर बौद्ध दर्शन के प्रभाव का विश्लेषण किया जाएगा।

मुख्य शब्द : बौद्ध दर्शन, करुणा, समानता,: अहिंसा, जातिवाद।

हिन्दी दलित साहित्य जिस प्रकार बौद्ध दर्शन से प्रभावित रहा है, उसी प्रकार हिन्दी दलित कविता पर भी बौद्ध दर्शन का प्रभाव देखा गया है। बौद्ध दर्शन पाखण्ड एवं बाह्याडम्बर का विरोध करता हुआ सामाजिक न्याय एवं समता का सन्देश देता है, जिसमें सबसे प्रखर स्वर के रूप में स्वतंत्रता, आत्मबोध, यथार्थ बोध की अभिव्यक्ति है और दूसरी तरफ जातिवाद, अवतारवाद के खंडन के स्वर को सुना जा सकता है। मध्यकाल के संत कवि जिन पर सिद्ध–नाथों का प्रभाव है वहाँ भी यह स्वर

देखने को मिलता है जिसका उदाहरण सुन्दरदास के निम्नलिखित पदों में देखा जा सकता है –

बौद्ध नाम तब जब मन को निरोध होई ।
बोध के विचार सोध आतम को करिये।।
सुन्दर कहत ऐसे जीवन ही मुक्ति होई।
मुए में मुक्ति कहे ता कूं परिहरिए ।।[1]

कँवल भारती का कहना है कि जिस समय हिन्दी में नया क्या है? और कविता क्या है? की बहस चल रही थी उस समय दलित कवियों की दूसरी और नयी पीढी तैयार हो रही थी। तात्पर्य यह कि हिन्दी साहित्य की दलित कविता सामाजिक सरोकारों की कविता रही है तथा उसमें साहित्य के सौंदर्यशास्त्र को ढूंढना बेमानी होगी।

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है सिद्ध–नाथों के माध्यम से वर्ण व्यवस्था पर प्रहार तो आदिकाल से ही प्रारम्भ हो जाता है, लेकिन सन 1914 में प्रकाशित हीरा डोम की भोजपुरी कविता 'अछूत की शिकायत' को प्रथम दलित कविता माना जाता है –

"खंभवा के फारी पहलाद के बंचवले /
ग्राह के मुँह से गजराज के बचवले।
धोती जुरजोधना कै भइया छोरत रहैं /
परगट होके तहाँ कपड़ा बढ़वले।
मरले रवनवाँ कै पलले भभिखना के /
कानी ऊँगरी पै थैके पथरा उठले।
कहंवा सुतल बाटे सुनत न बाटे अब /
डोम तानि हमनी क छुए से डेराले।।"[2]

यह कविता निश्चित रूप से समाज में एक वर्ग की असहाय स्थिति को दर्शाती है। जो भगवान् त्राहनहार के रूप में सभी की रक्षा करते आए। वे ही हमारी जाति को देखकर स्पर्श करने से भी डरते हैं। अर्थात् जाति ही उद्धार का आधार है। यह पीड़ा 'हीरा डोम' एक जाति विशेष वर्ग के लिए सन् 1914 में महसूस करते हैं और एक क्षेत्रीय भाषा में अभिव्यक्त करते हैं। महावीर प्रसाद द्विवेदी जो खड़ी बोली को स्थापित करने में अग्रगण्य है वे इस क्षेत्रीय बोली की कविता को सन 1914 में 'सरस्वती' में भी स्थान देते हैं।

हिन्दी साहित्य में दलित कविता की शुरूआत को 20 वीं शताब्दी के आठवें दशक से माना जा सकता है। इसकी पृष्ठभूमि में बौद्ध दर्शन तथा डॉ. अम्बेडकर, फूले के आन्दोलन एवं मराठी दलित साहित्य को महत्वपूर्ण माना जा सकता है। हिन्दी दलित कवियों में ओमप्रकाश वाल्मिकी, श्योराज सिंह बेचौन, कँवल भारती, अनीता भारती, रजनी तिलक, सुशीला टाँक भौरे, मलखान सिंह, एन. सिंह, जयप्रकाश कर्दम को प्रमुख रूप से देखा जा सकता है। ये सभी कवि तथा अन्य कवि जो दलित कविता के क्षेत्र में रचना कर रहे हैं, निश्चित रूप से उनकी पृष्ठभूमि में बौद्ध दर्शन के प्रभाव को प्रमुखता से देखा जा सकता है।

ओमप्रकाश वाल्मिकी सदियों से पीड़ित जाति की आवाज को उठाते हुए अपनी कविता 'बस्स ! बहुत हो चुका' में लिखते हैं–

"जब भी देखता हूँ मैं / झाड़ू या गन्दगी से भरी बाल्ट
कनस्तर / किसी हाथ में / मेरी रगों में / दहकने लगते हैं
यातनाओं के कई हजार वर्ष एक साथ /
जो फैले हैं इस धरती पर
ठंडे रेत–कणों की तरह।"[3]

वहीं दूसरी तरफ एक वर्ग विशेष द्वारा समाज में नकारे जाने पर उनकी प्रतिक्रिया 'अच्छा ही हुआ' कविता के माध्यम से व्यक्त होता है जिसमें बौद्ध सिद्धांत 'आत्मबोध' और 'शील' के उदाहरण देखने को मिलते है

"कालग्रस्त अँधेरों की सिसकियाँ / और मुक्ति का घोषणा–पत्र लिखने के लिए / अच्छा ही हुआ / मैं नहीं जन्मा उच्चवर्गीय माँ के गर्भ से।[4]

बुद्ध ने अपने उपदेश को आँखें बंद कर स्वीकारने के लिए नहीं कहा इसीलिए उन्होंने इसे कसौटी पर कसकर परखने की बात की। श्याम सिंह 'शशि' की कविता 'मैंने कब कहा' में ऐसे ही भाव द्रष्टव्य है –

"मैं नहीं हूंगा / मेरे अक्षर रहेंगे / युग–युगों तक
आकाश में / मेरे स्वर जियेंगे।"[5]

गौतम बुद्ध का विश्वास मूर्ति पूजा में नहीं था। उन्होंने सभी प्रकार की रीति–परम्परा एवं पूजा पद्धति की बाह्याडम्बर का विरोध किया। ईश्वर की अवधारणा

का कोई रूप ही वहाँ विद्यमान नहीं है, इसी बात को मलखान सिंह अपनी कविता 'आखिरी जंग' में स्वर देते है–

"हू–बी–हू तेरी शक्ल से मिलाती है/और तेरी बनी–ठनी मेहरिया नगर की शौकीन बनेगी/दिखाई देती है हमें।

हम जब भी तेरे कदमों में/सर रखने की सोचते हैं तेरा धरती में गड़ा स्थूल लिंग अग्रज एकलव्य का अँगूठा प्रतीत होता है हमें।"[6]

यह अभिव्यक्ति अनीश्वरवाद से एक कदम आगे बढ़कर भारतीय संस्कृति एवं मिथक को भी अँगूठा दिखाता हुआ सा प्रतीत होता है तथा अपनी अभिव्यक्ति में कुरूपता की सीमा में प्रवेश करता है।

बौद्ध दर्शन समता का सन्देश देता है जहाँ जाति–धर्म एवं वर्ण की दीवार की कोई मान्यता नहीं है। यह ऊँच–नीच के भेदभाव की जगह समानता को महत्व देता है। इसके साथ ही दुःख और वेदना का बौद्ध धर्म में महत्वपूर्ण स्थान है। रजनी तिलक की कविता 'करोड़ों पदचाप हूँ' में दुःख और वेदना के साथ समता और स्वतंत्रता की मजबूत अभिव्यक्ति होती है –

"मेरे आँसू, आँसू नहीं हैं जंग का पैगाम है।/इकाई नहीं मैं करोड़ों का पदचाप हूँ, मूक नहीं मैं आधी दुनिया की आवाज हूँ /नए युग का सूत्रधार हूँ।"[7]

बौद्ध धर्म के अनात्मवाद और अनीश्वरवाद का प्रभाव हिन्दी दलित कविताओं पर देखने को मिलता है। मोहनदास नैमिशराय की कविता 'ईश्वर की मौत' में अनात्मवाद और अनीश्वरवाद का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है क्योंकि यहाँ को कठघरे में खड़ा कर दिया गया है –

"जब मेरे भीतर/उभरता है सवाल/ईश्वर का जन्म किस माँ की/कोख से हुआ था/ईश्वर का बाप कौन?"[8]

इस प्रकार हिन्दी साहित्य की दलित कविताओं में भी निरंतर अस्मिता की खोज है जो अपनी सदियों की दासता एवं यंत्रणा से मुक्ति चाहती है। दलित कविता केवल आक्रोश की ही कविता नहीं है बल्कि सदियों के संताप की यथार्थ अभिव्यक्ति है। इस यथार्थ की अभिव्यक्ति जाहिर है आक्रोश के कारण कहीं–कहीं वीभत्स भी हुई तो अकारण ही उसके सौन्दर्यशास्त्र की खोज शुरु हो जाती है जो कि बेमानी है। महज इतना कहना पर्याप्त होगा कि उसका यथार्थ ही उसका सौन्दर्य है और सौन्दर्यशास्त्र भी। यह सौंदर्यशास्त्र बौद्ध धर्म की आँच से शक्ति एवं गर्मी प्राप्त कर निरंतर आगे की ओर बढ़ रहा है।

– डॉ. राहुल सिद्धार्थ
सहायक प्राध्यापक (हिन्दी)
भाषा, साहित्य एवं कला संकाय
साँची बौद्ध–भारतीय ज्ञान अध्ययन विश्वविद्यालय,
साँची (म. प्र.) मो.नं. 9968380151

संदर्भ :

1. सुंदर ग्रंथावली भाग 2, सं.रमेश चन्द्र मिश्र, किताब घर प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 610

2. सरस्वती पत्रिका में प्रकाशित/ वसुधा–58, जुलाई–सितम्बर, 2003, पृष्ठ सं. 65

3. बस्स! बहुत हो चूका (कविता संग्रह), ओम प्रकाश वाल्मीकि, वाणी प्रकाशन, दिल्ली 1997, पृष्ठ सं.–79

4. अब और नहीं (कविता संग्रह), ओमप्रकाश वाल्मिकी, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली 2009, पृष्ठ सं. – 55

5. अग्निसार (कविता संग्रह), श्याम सिंह शशि, के. के. पब्लिकेशन, दरियागंज, नई दिल्ली, 1989, पृष्ठ सं.–78

6. सुनो ब्राह्मण, मलखान सिंह, kavitakosh-org, दिनांक 12/2/2017 को देखा गया

7. पदचाप, रजनी तिलक, निधि बुक्स, पटना, 2008, पृ.सं. 34

8. दलित निर्वाचित कविताएँ, सं.मोहनदास नैमिशराय, कँवल भारती साहित्य उपक्रम, सं. 2006, पृ.सं. 65

Sugamya Bharat Abhiyan : A meaningful initiative for the differently abled

- Dr. Santosh Patidar

Introduction

Accessibility is an important aspect associated with disability. Accessibility provides a barrier - freeenvironment to the disabled in which they are able to develop themselves better. While accessibility is essential for inclusion of the disabled, through this they can ensure their smooth and secure participation in the society. It is clear that accessibility is an initiative that makes the future Divyang accessible and golden. The vision of the campaign is to envision an inclusive society in which equal opportunities are available for the progress and development of persons with disabilities so that they can lead productive, safe and dignified lives. Keeping this things in mind, the Sugamya Bharat Abhiyan has been launched in India.

Key words : Accessibility. Campaign, Barrier free environment, Public transport, Development.

Before proceeding to the discussion on the accessible India campaign, it would be appropriate to look at the national and international legal systems referenced with accessibility. The right of accessibility for persons with disabilities in India has been recognized under the Persons with Disabilities (Equal Opportunities, Protection of Rights and Full Participation) Act 1995. Section 44 of the act prohibits discrimination in transport, while section 45 prohibits discrimination on the road. Section 46 prohibits discrimination in the built environ-ment[1]. India has also signed the UN convention (UNCRPD) which focuses on the rights of disabled people. Under Article 9 of this, all Government signing have been subjected to accessibility in physical infrastructure, transport, information and communication technology, services and emergency services for the differentlyabled. Physical environment, public transport. knowledge, information and communication in three of the ten features of the decade long 2013 to 2022 action plan Incheon Strategy for the Asia Pacific region and the world to make society free of

disabilities and their rights for the disabled accessibility has been encouraged with emphasis on providing the facility.[2]

In order to encourage the inclusion of differently abled people through accessibility and to provide a barrier free environment to them, The Sugamya Bharat Abhiyan was launched on 3 December 2015 on the occasion of International Day for the disabled. It is a nationwide campaign under the Department of Disability Affairs of the Ministry of Social Justice and Empowerment. aimed at providing equal opportunities for universal access development, free livelihood and participation in all aspects of life in an inclusive society across the country[3]. The highlight of this campaign is that its strategy paper is based on the objectives and indicators of goal three of the "Inche on Strategy" (2013 to 2022).

Under this campaign, whilea special university will be set up by the government for the disabled people at a cost of Rs. 1700 crore, a web portal and mobile app have also been started to spread awareness about it. Under this campaign where at least 50% of all government buildings in the national capital Delhi and all state capitals will be made fully accessible to the disabled by July2018. At the same time, minimum 10 percent of the country's government transport vehicles will be made fully accessible to the disabled by March2018. It will also be ensured that at least 50% of all public document issued by the Central and State Government by March 2018 are compatible with accessibility standard for the disabled. In this series, all international airports and Al. A and B class railway stations are being made fully accessible under this campaign.

In this campaign, emphasis has also been laid on the provision of accessibility for the disabled in smart cities. That is efforts will be made to make smart cities more and more accessible and in urban planning, full care will be taken of the needs of the disabled. With an aim to increase the scope of the Sugamya Bharat Abhiyan, the inclusive and Accessibility Index was launched on 30 march 2016 at Vigyan Bhawan, Delhi which is capable of measuring the accessibility of both public and private organizations. This index prepared in collaboration with FICCI, is considered to be very important for connecting the

corporate sector and NGOswith the Sugamya Bharat Abhiyan It assesses accessibility of various organizations, companies or workplace based on fixed scales and criteria, and provides a statistical basis for expressing this accessibility. This is a type of challenge for organizations at the backward level in the Statistics Base Index, which paves the way for continuous improvement of workplaces for PWDS. This index in not only beneficial for the differentlyabled, but also for institutions and organizations in such way that they can increase the morale of the employees by implementing it while doing the same.

Under the Suganya Bharat Abhiyan with the aim of promoting accessibility and usability of information and communication technology services, accessible public website will be provided while public document and availability of information in accessible format will be emphasized. In this sequence there will be a provision of caption and audio description in public television programs. Under the campaign, accessibility accounting has been arranged in 16 cities of the country and it has been implemented in fully accessible buildings.

In the form of the Sugamya Bharat Abhiyan, a good initiative has been taken for the differently abled, but it also has some shortcomings and some challenges. The format of the accessibility standard in this campaign is not very clear. This can impede its implementation. In this campaign-special. emphasis has been laid on accessibility accounting, but the practical problem is that we do not have sufficient auditors nor adequate training to prepare an accessibility auditor. A drawback associated with this campaign is that the entire focus is on urban areas. In such a situation the question is that how will accessibility improve in rural areas. The campaign focuses on state owned infrastructure. It does not include facilities provided by the private sector. These shortcomings are making this campaign weak.

Some more initiatives are still needed to make the Sugamya Bharat Abhiyan more powerful and effective. The first step should be to ensure that accessibility for the disabled is included as an integral part of a series of laws and policy structure apart form the Disability Rights Act. In engineering,

designing and architecturecourses, accessibility should be given as a compulsorysubject and inclusion and accessibility for the differently abled should be ensured in the guidelines of all development programs. Accessibility should be taken care of in government procurement and it should be ensured that the items purchased are accessible to the differently abled. For the success of campaigns such as accessible India, it is also necessary that the rules of accessibility be made legally binding on the private sector as well. Given the expansion of the private sector this initiative is very important.

- Dr. Santosh Patidar
Assistant Professor
Chameli Devi
Institute of Law, Indore
Mob : 98267 75780

References :

1. Rehabilitation Council of India Act, 1992.
2. Person with Disabilities (Equal Opportunities, Protection of Rights and Full Participation) Act, 1995.
3. The Rights of Persons with Disabilities Act, 2016.

Bonding Beyond Trauma : A Study on Vendela Vida's The Lovers

- Akila V1
Research Scholar of English
- Dr. S. Ramya Niranjani, 2
Associate Professor of English

Abstract :

Literature has the magical quality of transporting the readers into the experiences of the characters by inviting them as fellow travelers in life's expedition. Human connections play a pivotal role in deciding the emotional well-being of a person. The well renowned contemporary American novelist Vendela Vida's The Lovers is a psychic narrative that sheds light on how sharing one's trauma helps to rejuvenate life with an optimistic attitude through the protagonist, Yvonne. This article intends to study how sharing heals the mental agony by providing cathartic relief for the characters.

Keywords : Human connection, sharing, trauma, emotional reciprocity, cathartic relief, The Lovers

Introduction :

The novel The Lovers revolves around the life of Yvonne, a newly

widowed elderly woman who revisits the places where she spent her honeymoon twenty-eight years ago, after her husband's demise. The narrative unfolds as Yvonne arrives in Turkey, grappling with grief and a sense of emptiness. She feels that she is confined and under surveillance after her husband's death. She is traumatized by thinking of the new vacuum shelters in her life because of losing her partner. Her life turns out to be a doll's house and she has a deep emotional withdrawal from others.

Main Text :

The acclaimed author, Vendela Vida has done a lot of research for framing her protagonist Yvonne by interviewing how other women overcome their trauma after their partner's death. She interprets, "What I noticed in talking to these women was how numb they felt at the 2-year mark, and I tried to incorporate that numbness into Yvonne's outlook on the world" (Burke).

Likewise, Yvonne experiences inertia, which makes her realize, “The grief fell in on her like a house collapsing" (41). Hence, she ventures into the path of self-discovery to heal her mental agony only after two years of her husband's demise. At her husband Peter's funeral, Yvonne's inner voice instructs, "It meant less every time someone pressed their hands into hers and looked at her meaningfully. Please stop talking. None of this is working" (93).

Yvonne has a sense of fulfillment by witnessing how her children thrive and move towards their destined goal without any detour, even in the absence of their father. At the same time, she is even more confused about how they easily move forward by accepting the bitter reality of life, unlike Yvonne, who sinks in the past memories that she created with her husband.

Francis Bacon's epigrammatic way of conveying meaningful life lessons still holds value, as its relevance and applicability have endured over time. The phrase, “I shall be strong enough to acknowledge without mourning that I was begotten moral" (Bacon 227). Based on the philosophical truth, Yvonne has to give up her emotional distress regarding her husband's death by accepting the impermanence of life. She decides to revisit Turkey, in order to retrace her husband's memories.

Yvonne has emotional reciprocity with Ozlem, who is the wife of Mr. Ali, whose house Yvonne has rented in Turkey. Yvonne divulges to Ozlem about her grief and uncertainties about life and

Ozlem shares her own struggles and aspirations in her professional and familial life with Yvonne. Ozlem helps Yvonne to remove the thick tars that submerge the car when Yvonne accidentally trails it by submerging herself in the thoughts of loneliness. Ozlem compares her life to the damaged car but in the end, it looks good though it bears the mark of the damages like her life.

Yvonne confides in Ozlem about her significant trauma that is her daughter Aurelia'saddiction to alcoholism. She becomes closer to Aurelia after she comes from rehabilitation centers despite her father vehemently distances her as she brings disgrace to the family's reputation. She feels dejected because of how he treats Aurelia, "He never said her name, as if her name alone caused the pain. Always it was she or her (141).

Yvonne feels a weight lifted off her heart after sharing her emotional turmoil with Ozlem, who brings solace during her emotional outburst. It is true in Yvonne's case that sharing the trauma with others offers the opportunity to gain different perspectives, which increases the healing process as well as finding solutions to the problem. After sharing her trauma, she, "awoke feeling good, relieved of a lie" (119).

Yvonne reiterates the significance of human connection by not only sharing her trauma with others but also expressing emotional reciprocity by providing empathetic support, which is mutually beneficial. Ozlem decides to leave her husband Ali, as she is emotionally broken because of his insults. She further infuriates herself upon realizing that her husband has a sexual relationship with the mistress. Yvonne supports her decision to leave Ali as he degrades her by considering her an insignificant person. She tries to value Ozlem's emotions by validating her experiences and instilling the belief that she is worthy. She entrenches self-confidence in Ozlem and feels, "I am the mother of whatever household I enter" (163).

At the end of the novel, Yvonne realises how her daughter Aurelia brings meaning to her futile life and manages everything flawlessly after Peter's death. She also realises that Aurelia genuinely gives up her dipsomaniac way of life by shedding herself from those vile tactics of deception, even before her father's death. Only Yvonne fails to comprehend it as her mind is pushed into the dark

tunnel of ignorance because it takes time to navigate through the cobwebs of trauma. She feels, "Aurelia was no longer a broken thing to be tinkered with. She was a woman, a person, and Yvonne needed her" (222-223).

Conclusion :

The novel ends as Yvonne changes her attitude and understands that human bonding is necessary to live life meaningfully. She makes up her mind to embrace the dynamic nature of her children, who are not mere figures in an unchangeable story of her life. In the end, she values the significance of human connection on seeing Aurelia and hope flourishes within her when she realises that she is not alone in this world. When Aurelia comes to save Yvonne

from the metaphorical whirlwinds of the unrelenting storms, she witnesses the outstretching arms that wait to embrace her like a shield to relieve her from all her traumas. She senses, "It

was a woman who had come to rescue her. She knew this woman. She had made this

woman" (225). The way in which Yvonne bounces back from adversity with her ray of hope reiterates the philosophical musings of Emily Dickinson through her poetic lines, "Hope is the thing with feathers / That perches in the soul" (Dickinson, line 1-2).

- Akila V1
Research Scholar of English

- Dr. S. Ramya Niranjani, 2
Associate Professor of English
Sri Sarada College for Women
(Autonomous)
Salem (Tamil Nadu), India.
93443203631/98947703432

References :

Bacon, Francis. "On Death." Essays, Or Councels Civil and Moral, edited by Samuel Weller Singer. Bell and Daldy, 1857.

Burke, Pamela. "Vendela Vida on Her Riveting New Novel About A Journey to Self Discovery." The Women's Eye, 23 July 2010

https://www.thewomenseye.com/2010/07/23/vendela-vidas-newest-novel-the-lovers-called-her-best/.

Dickinson, Emily. "Hope is the thing with feathers". The Collected Poems of Emily Dickinson. Grapevine India, 2023.

Vida, Vendela. The Lovers. Atlantic Books, 2012.

आजादी में प्रवंचित वर्ग की सहभागिता और आपराधिक अधिनियम

– डॉ. धर्मवीर यादव
Post Doctoral fellow ICSSR 2022-23 JNU

शोध सार –

उत्तर भारत में ऐतिहासिक स्वतंत्रता संग्राम के लिए विद्रोह का प्रारम्भ 10 मई, 1857 को हुआ। जब मेरठ में हिंदू मन के सैनिकों ने सूअर की चर्बी वाले कारतूसों के अस्थावादी प्रश्न पर कुछ ब्रिटिश अफसरों को गोली मार दी। वे अपने साथियों को रिहा करवा कर दिल्ली की तरफ कूच हुए। इस क्रांति में दस्तकारों, किसानों, मजदूरों, दलितों व कुछ जमींदारों ने भी सैनिकों के साथ–साथ बढ़–बढ़कर भाग लिया। इस विद्रोह की विशेषता थी, गहन सरकार विरोधी भावना की सक्रिय अभिव्यक्ति, कई स्थानों से अंग्रेजी राज के राजकीय–चिन्ह तक हटा और मिटा देने का प्रयास किया गया। इन्हीं सभी वस्तु स्थितियों पर इस शोध आलेख में लेखन किया जायेगा ।

बीज शब्द – 10 मई, 1857, क्रांति, विद्रोह, संस्कृति, दलित, दस्तकार, किसान, जमींदार, सैनिक, उपनिवेश, अंग्रेज आदि।

आलेख – आज, अतीत के सामाजिक और ऐतिहासिक अर्थों को पुनः परिभाषित किया जा रहा है । इस प्रक्रिया में अतीत से प्रेरणा लेकर वर्तमान को बदलने और अपनी उपेक्षित स्थिति से उबरने का उसे माध्यम बनाया जा रहा है।[1] अतीतग्रस्तता एक सहज प्रवृत्ति है, मुख्यतः असहाय बने अकर्मण्य लोगों की सामान्य स्थितियों में व्यक्ति स्वप्नजीवी होता है। इतिहास बोध विशेष स्थितियों में विशेष प्रयास से पैदा होता है । उसमें सहजता नहीं, सजगता और सक्रियता प्रमुख तत्व है।[2]

भारतीय जनमानस में लोग इन शहीदों की स्मृतियाँ मिटा रहे हैं। 31 मई, 1860 को जिन क्रांतिकारियों को फाँसी दी गई थी। उसमें कुछ दलित, किसान और मजदूर थे। लगता है इसी वजह से मुल्क की आजादी के बाद किसी भी नेता ने उन शहीदों की स्मृति पर विशेष ध्यान नहीं दिया।[3] अब आधुनिक भारतीय राष्ट्र के निर्माण में प्रवंचित जातियों की भूमिका का वर्णन करने वाले वृत्तान्त पुस्तिका रूप में प्रकट हो रहे हैं।

1857 के विद्रोह के पीछे ब्रिटिश सरकार के रवैये भी जिम्मेदार रहे हैं। पूर्व में ब्रिटिश सत्ता के खिलाफ लड़ने वाली यहाँ की कुछ प्रमुख जातियों को अपराधिक श्रेणी में डालना भी प्रमुख कारणों में था। ये वंचित जातियाँ अपने राज–पाट, सत्ता, सामाजिक–सांस्कृतिक, आर्थिक पहलूओं को लेकर 1857 से पहले ही ब्रिटिश एवं अन्य यूरोपीय शक्तियों से लड़ रहे थे। इस कारण इन्हें ब्रिटिश सरकार ने 1793 से चिह्नित करना शुरू कर दिया था और अन्ततः 1871 तक आते–आते Criminal Act बनाकर इन्हें आपराधिक जातियों की श्रेणी में डाल दिया।

इसकी पृष्ठभूमि में जब हम जाते हैं तो पाते हैं कि Several theories have been advanced regarding the origin of these CTs- According to one view] they have descended from the gypsies- It was held by some that the CTs owe their origin ta the aborigines] who had been displaced from time to time by the incursions of the inhabitants of Central Asia/Aryans.[4]

इन अपराधी जातियों के बारे में दलित इतिहास विद सतनाम सिंह लिखते हैं कि देश के सामाजिक ढांचे में हाशिए पर पड़ी जिन जातियों के पूर्वज अंग्रेजों से सौ वर्ष से भी अधिक समय तक टक्कर लेते रहे। उन्हें अंग्रेजों ने आपराधिक सूची में डाल दिया। भार, पासी, चमार, कोरी और दुसाद जैसी दलित जातियां 1857 से कहीं पहले ही अंग्रेजों से लोहा ले रही थीं। इन्हें दण्ड

देने के लिए भारत में 1793 का कानून लागू था। 1857 की क्रान्ति के बाद इसी एक्ट को आई.पी.सी. (1860–61) में बदल दिया गया।[5]

The Criminal Tribes Act of 1871 created a list of criminal castes - The listed members had limitations on their freedom of movement and capacity for socialisation- Ahir, Gujjar, Lodhi, Chamars, Sanyasis, Bowreah, Budducks, Bedyas, Domes, Dorms, Rebari] Bhar, Pasi, etc- were the main caste groupings that were viewed as criminals by birth- The Criminal Tribes Act] 1871 also targeted the trans gender population.[6]

The socio-economic factors responsible for declaring them as criminal tribe are: (1) Conditions of insecurity prevailing in Madras Presidency- (2) Administrative mismanagement in areas of limitless revenue eÛtortions which resulted in the pauperisation of the country sides and consequent misery of the people- (3) The havoc created by the Rajas and Zamindars- (4) The failure of monsoons] recurring famines and drought situations-(5) The disorder, Jaw and order situation in the state, etc.[7] इस क्रिमिनल एक्ट के अंतर्गत आने वाली जातियाँ इस अधिनियम के विरुद्ध लड़ रही थी। जिसमें वंचित जातियों ने 'भारतीय आदिमजाति सेवक संघ'[8] नाम से सामाजिक संगठन बना रखा था। इसी संगठन से वे इस अधिनियम के विरुद्ध संघर्ष कर रही थी ।

यह विचारणीय प्रश्न है कि इस अधिनियम के अंतर्गत एक भी प्रभु जाति प्रतिबंधित नहीं थी। ऐसा क्यों था ? कारण था कि जो जातियाँ ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध किसी भी प्रकार की गतिविधि करती थी । उसे ये लोग गुप्त सूचना देकर आपराधिक सूची में डलवा देते थे ।

वैसे, ये प्रवंचित जातियां दोहरे शोषण की शिकार होती रहीं। एक तो ब्रिटिश साम्राज्य दमनकारी कानून से दूसरे अंग्रेजों के देसी कारिंदों ने प्रवंचित जातियों का खूब शोषण किया। दूसरे स्पीड डीसी डिंकर लिखते हैं – इस कानून का लाभ अंग्रेजों को कम लेकिन उनके भारतीय सहयोगियों को ज्यादा मिला। इसकी आड़ में उन लोगों ने अछूतों को खूब सताया। उनकी गिरफ्तारी का भय दिखाकर अछूतों को अपना बंधुआ मजदूर बनाकर रखते थे। उनकी बहू बेटियों का शोषण करते थे। इस क्रम में अछूत पीढ़ी दर पीढ़ी गुलामी के लिए मजबूर किए गए।[9]

भारत में ऐसी सामाजिक रूप से दोहरी गुलाम प्रवंचित जातियों के लिए ज्योतिबा, फुले, पेरियार, अंबेडकर अपनी लड़ाई शुरू की। इसका सामाजिक परिणाम रहा कि पेरियार ने बहुत पहले मद्रास में इस कानून को खत्म करवा दिया था। वहीं ज्योतिबा फुले और डॉक्टर अंबेडकर ने महाराष्ट्र में इस कानून को खत्म करवाया।

1920 में 'द चमार' पुस्तक के लेखक डब्लू ब्रिग्स लिखते हैं कि चाइन जो चमार जाति की उप शाखा है। इस जाति के लोगों को आपराधिक चोर, ठग, धोखेबाज समझा गया। मजबूरन लंबे समय से लूटपाट और डकैती करते आ रहे हैं। कानून का पालन करते आ रहे लोगों में इनका आतंक होता है और यह लोग प्रायः पुलिस की निगरानी में रहते हैं।[10] यहां की सामाजिक स्थिति और अपराधिक जातियों में धीरे–धीरे आए सुधार का अध्ययन करते हुए धीरे–धीरे भी आपराधिक सूची से कई जातियों को बाहर किया।

उत्तर भारत में आपराधिक अधिनियम से बाहर आने के लिए नवंबर 1921 ईस्वी में दलित विधान परिषद सदस्य 'विश्वनाथ करने' बिहार और उड़ीसा की अपराधिक जातियों की मुक्ति के लिए प्रश्न उठाए।

इस विधान परिषद में रामगुलाम चौधरी ने पूर्व में उठाए गए यमुनाराम का समर्थन किया कि अपराधिक एक्ट खत्म किया जाना चाहिए अब्दुल गनी ने इसका समर्थन किया और कहा कि इनकी आर्थिक मदद करनी चाहिए। परिषद में शक्ति कुमार ने अपनी बात रखते हुए कहा जिस तरह से दूसरे प्रान्त में जैसे मद्रास मुंबई

वगैरह में आपराधिक अधिनियम खत्म किया गया। उसी तरह नॉर्थ में भी आपराधिक अधिनियम को खत्म किया जाना चाहिए।[11] ऐसे अनेक आपराधिक अधिनियम लंबे संघर्ष के बाद खत्म हुए ।

इस प्रकार प्रवंचित वर्ग स्वतंत्रता के लिए अपनी सहभागिता का निर्वहन कर रहा था । जो आधुनिक राष्ट्र–निर्माण की ऐतिहासिक पहल थी ।

– डॉ. धर्मवीर यादव

Post Doctoral fellow, ICSSR 2022-23, JNU
C/O Ganeshi Lala
Room N. 163 Old, Brahmaputra hostel,
Poorvanchal, Jawaharlal Nehru University,
New Delhi Pin 110067
Wtsp Mob. +9013710377

संदर्भ :

1. डेविस 2003 : 5
2. लालबहादुर वर्मा, इतिहास के बारे में, 1984 : 43
3. के. नाथ, 1857 दलित्स अनटोल्ड हिस्ट्री, 2007 : 03
4. Lalitha] V-, The Making of Criminal Trikes patterns and fransition] Madras] 1995, p- 12
5. सिंह, सतनाम, अछूत जातियों का स्वतंत्रता संग्राम में योगदान, 2013 : 10
6. https://blo.-ipleader.in/criminal-tribes-act -1871/#:~:text=Ahir%2C%20Gujjar%2C%20Lodhi%2C%20Chamars] also%20targeted%20the%20transgender%20population
7. See Government of Madras, Administration Reports of the Inspector vos, General of Palice from 1904-1920, Madras, Collected from Tamil Nadu archives TNA
8. Ibd
9. सिंह, सतनाम, अछूत जातियों का स्वतंत्रता संग्राम में योगदान, 2013 : 16
10. उपरोक्त
11. उपरोक्त

योग द्वारा तनाव प्रबंधन

– डॉ. मीरा त्यागी

आज की भागदौड़ भरी जिन्दगी में तनाव हमारे जीवन का एक अनिवार्य हिस्सा बन गया है। हालांकि इसे पूरी तरह से टाल नहीं सकते किन्तु हम योगाभ्यास के माध्यम से तनाव को प्रभावी ढंग से प्रतिबंधित और कम कर सकते हैं। योग एक प्राचीन अनुशासन है जो मन, शरीर और आत्मा में सामंजस्य लाता है। तनाव प्रबन्धन के लिए योग एक शक्तिशाली उपकरण का कार्य करता है, लेकिन लम्बे समय तक तनाव बने रहना हमारे शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव डाल सकता है। यह हृदय रोग, अवसाद, चिन्ता और विभिन्न स्वास्थ्य समस्याओं से जुडा हुआ है। स्वस्थ एवं संतुलित जीवन जीने के लिए तनाव का प्रबन्धन करना अति आवश्यक है ।

तनाव क्या है – तनाव एक प्राकृतिक मानवीय प्रतिक्रिया है जो हर किसी को होती है। वास्तव में शरीर तनाव का अनुभव करने और उस पर प्रतिक्रिया करने के लिए डिजाइन किया गया है। जब परिवर्तन या चुनौतियों (तनाव) का अनुभव करते हैं, तो शरीर, शारीरिक एवं मानसिक प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न करनी शुरू कर देता है। यही तनाव प्रतिक्रियाएं शरीर को नई परिस्थितियों के अनुकूल ढालने में मदद करती है। तनाव सकारात्मक हो सकता है– जो व्यक्ति को सर्तक, प्रेरित और खतरे से बचाने के लिए तैयार रखता है । उदाहरण के लिए, यदि आपकी कोई महत्त्वपूर्ण परीक्षा आने वाली हो, तो तनाव प्रतिक्रिया आपके शरीर को अधिक मेहनत करने और अधिक समय तक जागते रहने में मदद कर सकती है। लेकिन तनाव तब समस्या बन जाता है जब तनाव के कारण राहत या आराम के दौर के बिना जारी रहते हैं।

तनाव के लक्षण – तनाव के मुख्य तीन लक्षण हैं–

A- शारीरिक लक्षण – जो निम्न है–

1. दर्द एवं पीड़ा आना।

2. थकावट या नींद न आना।

3. सिरदर्द व चक्कर आना।

4. उच्च रक्त चाप।

5. पेट या पाचन सम्बन्धी समस्याएँ।

6. मांसपेशियों में तनाव या जबड़े का सिकुडना।

7. सीने में दर्द या यह महसूस होना कि दिल तेजी से धड़क रहा है।

B-मानसिक लक्षण – जो निम्न है–

1. चिन्ता या चिडचिड़ापन।

2. अवसाद।

3. आतंक के हमले।

4. दुःख

C-व्यवहारिक लक्षण – अक्सर तनाव से पीड़ित लोग तनाव से निपटने के लिए अलग–अलग चीजें अजमाते हैं और उसमें से कुछ चीजें आदत बनाने वाली होती है, जो स्वास्थ्य पर बुरा असर डाल सकती हैं। इनमें शामिल हो सकते हैं –

1. शराब उपयोग विकार।

2. जुआ खेलना।

3. धूम्रपान।

4. पदार्थ उपयोग विकार।

5. अधिक भोजन करना या भोजन विकार का विकास होना ।

तनाव के कारण – तनाव वह है जिसमें शरीर किसी बदलाव या चुनौती पर प्रतिक्रिया करता है, और कई अलग–अलग चीजें इसके लिए जिम्मेदार हो सकती है। तनाव के कारक सकारात्मक एवं नकारात्मक भी हो सकते हैं। उदाहरण के लिए नई नौकरी मिलना या छूटना दोनों ही तनाव का कारण बन सकते हैं। तनाव के मुख्य कारणों में शामिल हैं–

1. किसी प्रियजन की बीमारी या मुत्यु ।

2. विवाह, अलगाव या तलाक ।

3. वित्तीय मुद्दे।

4. नये घर में जाना ।

5. छुट्टी पर जाना ।

6. बच्चा न होना ।

7. किसी मित्र या प्रियजन के साथ बहस होना ।

8. कम समय में बहुत सारे कार्य करना की जरूरत होना ।

तनाव से होने वाली समस्याएँ – ये निम्नलिखित है–

1. मानसिक स्वास्थ्य समस्याएँ, जैसे अवसाद, चिंता और व्यक्तित्त्व विकार।

2. हृदय रोग, उच्च रक्तचाप, असामान्य हृदय ताल, दिल के दौरे और स्ट्रोक सहित हृदय सम्बन्धी रोग ।

3. मोटापा एवं अन्य खान–पान सम्बन्धी विकार ।

4. मासिक धर्म सम्बन्धी समस्याएँ ।

5. यौन रोग, जैसे पुरूषों में नपुंसकता और शीघ्रपतन तथा पुरूषों और महिलाओं में यौन इच्छा की कमी।

6. त्वचा और बालों की समस्याएँ जैसे मुँहासे सोरायसिस और एक्जिमा और स्थायी रूप से बालों का झड़ना ।

7. अल्सरोटिव कोलाइटिस और चिडचिड़ापन आंत्र सिंड्रोम ।

तनाव का यौगिक प्रबन्धन–

1. यम नियम – तनाव प्रबन्धन में यम–नियम का विशेष स्थान है। यम– अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का पालन करने से व्यक्ति स्वयं भी तथा समाज में भी शान्ति स्थापित कर सकता है। यम प्रत्येक व्यक्ति के लिए सार्वदेशिक व सार्वकालिक पालन योग्य है। नियम–शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय एवं ईश्वर प्राणिधान व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित है। जिनका पालन करने से व्यक्ति सुखी एवं संतुष्ट जीवन व्यतीत कर सकता है।

2. भावना चतुष्टय – तनाव प्रबन्धन हेतु भावना चतुष्टय – सुखी लोगों के प्रति मित्रता, दुखियों के प्रति करुणा, पुण्यात्माओं के प्रति प्रसन्नता तथा पापात्माओं के प्रति उपेक्षा का भाव रखना चाहिये। क्योंकि सुखी लोगों के प्रति ईर्ष्या भाव रखने से तनाव का जन्म होता

है। दुःखी लोगों के प्रति करूणा व पुण्यात्माओं के प्रति प्रसन्नता का भाव रखने से मन में सकारात्मक भाव आते हैं। पापियों की उपेक्षा से मन में घृणा उत्पन्न नहीं होगी। इस प्रकार के भावों से मन तनाव मुक्त हो जायेगा ।

3. आसन व प्राणायाम – तनाव मुक्त रहने के लिए प्रतिदिन कुछ आसनो का अभ्यास अवश्य करना चाहिए क्योंकि इनसे हमारे शरीर में शुद्ध ऑक्सीजन का संचार होता है। जिससे हमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है तथा रोग दूर होते हैं। एक रिसर्च में यह तथ्य सामने आया है कि तनाव ग्रस्त व्यक्ति यदि प्रतिदिन योगासन करे, तो उसे तनाव से काफी राहत मिलती है। 'योगासन शारीरिक अंगों को प्रभावित करते हैं। तनाव से हमारे शरीर में कई प्रकार के जैविक बदलाव आ जाते हैं। जिन्हें योगासनों के द्वारा नियन्त्रित किया जा सकता है।' साइकोमैट्रिक मेडीसिन के शोध पत्र में प्रकाशित शोध से ज्ञात हुआ है कि प्रतिदिन योग का अभ्यास करने से तनाव का स्तर कम हो जाता है। तथा प्रसन्नता के हार्मोंस बढ़ जाते हैं। प्राणायाम के अभ्यास से भी शरीरिक एवं मानसिक रोग दूर हो जाते हैं । प्राणायाम मस्तिष्क एवं समस्त शरीर में ऑक्सीजन का संचार करता है। प्रतिदिन प्राणायाम के अभ्यास से एकाग्रता एवं स्मरण शक्ति का संचार भी होता है तथा तनाव से राहत मिल जाती है।

4. ध्यान और योगनिंद्रा – ध्यान तनाव को कम करने की एक सरल विधि है ध्यान में चुपचाप बैठकर आँखे बंद करके अपनी सांसों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। ध्यान तनाव से लड़ने वाले प्रतिरोधक के रूप में कार्य करता है वेस्ट वर्जीनिया यूनिवर्सिटी में किए गये एक अध्ययन में शोधकर्ताओं ने पाया कि जिन प्रतिभागियों ने लगभग 3 महीने ध्यान का अभ्यास किया उन्होंने लगभग 44 प्रतिशत तनाव की कमी का अनुभव किया । एक शोध में संयुक्त राज्य अमेरिक में पाया गया कि ध्यान के अभ्यास से तनाव को दूर किया जा सकता है। योग निंद्रा का अभ्यास भी तनाव मुक्ति में सहायता करता है। योगनिंद्रा में शरीर को ढीला छोड़कर लेट जाते हैं तथा अपनी सांसों पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। महसूस करते हैं कि प्राण ऊर्जा हमारे शरीर में प्रवेश कर रही है तथा शरीर रोग मुक्त हो रहा है। योगनिंद्रा को आध्यात्मिक नींद भी कहते हैं। यह मस्तिष्क के स्नायु कोषों को आराम देकर व्यक्ति को तनाव मुक्त करती है ।

निष्कर्षत : हम कह सकते हैं कि यम–नियम का पालन, आसन–प्राणायाम, योगनिंद्रा व ध्यान के अभ्यास

– डॉ. मीरा त्यागी
(असि. प्रो. तदर्थ)
कन्या गुरुकुल, हरिद्वार मोबा. 78956 944051

संदर्भ :

1. डॉ. मीरा त्यागी, असिसटेंट प्रोफेसर तदर्थ, कन्या गुरूकुल परिसर, हरिद्वार।
   Email-meera tyagi@gkv-ac-in
2. अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः ।
   योगदर्शन–2/30
3. शौचसंतोषतपः स्वध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः ।
   योगदर्शन–2/32
4. मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणं सुखदुःखपुण्यापुण्य–विषयाणां भावनातश्चित्तप्रसादनम् ।
   योगदर्शन–1/33
5. पूर्णिमा, मानसिक रोग हो तो अपनाएं योग, 26 मार्च 2014
6. प्रो. गंगाधर, न्यूरोबायोजी ऑफ, योग थैरेपी, पूर्व विभागाध्यक्ष निमहैंस बैंगलोर ।
7. योग आपके लिए नहीं? दौबारा सोचें, मनीष कोहली, 24 जून 2014
8. शोध छात्र, वेस्ट वर्जीनिया यूनिवर्सिटी, द स्टैडी ऑफ योगा।
9. शोध छात्र, अलबर्टा विश्वविद्यालय, संयुक्त राज्य अमेरिका, द लेटैस्ट डप्वलोप्मेंट इन द साईन्स।

अस्थियों के अक्षर : मर्यादाओं से अपराधीकरण तक का सफर

– डॉ. गोपाल जीनगर

भारत में उन्नीसवीं शताब्दी का आरंभ वैचारिक मुठभेड़ों और विश्वयुद्ध की सुगबुगाहट के साथ शुरू हुआ। प्रथम विश्वयुद्धमें ब्रिटिश सेना की ओर से भारतीय नौजवान 'लहनासिंह' जैसे सैनिक लड़े और शहीद हुए।द्वितीय विश्वयुद्ध के कुछ सालों के पश्चात् संपूर्ण विश्व दो ध्रुवों में बंट गया और शीत युद्ध का सफर शुरु हुआ। इस दौर में राजनीतिक मशाल को लेकर चलने वालें अधिकांश लेखकों ने अपने–अपने गुट बना लिए।

वास्तव में लेखन स्वयं के अनुभव के साथ मानवीयता और वैज्ञानिकता को आमंत्रित करता है, जो इन गुटों के शासन और शासनाध्यक्षों में समय के साथ गायब हुई। परन्तु लेखक समय के साथ इन गुटों की खोल से बाहर आकर अपनी लेखनी को अनुभवों के साथ रंगने लगें। उन्हें महसूस होने लगा कि उनकी प्रतिबद्धता किसी गुट या विचारधारा के साथ नहीं, बल्कि स्वयं के प्रति है। वह जिस तरह समाज और उसके बदलते रूप को देखता है, उसकी लेखनी भी उस सत्य को उसी रूप में ढालती है। अज्ञेय शरणार्थी की भूमिका में लिखते भी हैं कि " हर 'बाहरी' सिद्धांत, संदेश और आदर्श झूठा है– लेखक की आस्था और कमिटमेंट इनमें से किसी को नहीं मिलनी चाहिए। वह किसी के प्रति प्रतिबद्ध नहीं होगा। होगा तो सिर्फ अपने प्रति। वह हर सिद्धांत, हर राजनीति, हर दर्शन और हर सामाजिक जिम्मेदारी से ऊपर है। इन धरातल पर उससे कुछ भी अपेक्षा करना उसकी 'विशिष्टता' पर संदेह करना है, उसे छोटा करना है। वह तो कार्लाइल का हीरो, शोपेनहार का जीनियस और नीत्शे का सुपरमैन है, अरविंद का सुपर माइंड है। जो उसका मन होगा वहीं लिखेगा। अपनी अनुभूति के अलावा कुछ भी लिखना आदेशित और आरोपित होगा।" उसके लेखन में जिम्मेदारी की झलक होनी चाहिए, लेकिन राजनीतिक वैचारिकता की गंध नहीं।

इस दौर के लेखन ने ग्रामीण और सामाजिक यथार्थ की अनेक कहानियों को सृजित किया। उन्हीं में से एक कहानी 'अस्थियों के अक्षर' है, जो वंचित वर्ग के यथार्थ को सामने रखती है। कहानी का मुख्य पात्र सौराज है। वह शिक्षा ग्रहण करने के प्रति उत्सुक है, लेकिन सामाजिक मर्यादाओं के कारण परिवार में अब आगे उसकी स्कूली शिक्षा हेतु स्वीकृति नहीं है तथा परिवार से आर्थिक सहायता के अभाव में मुख्य पात्र चोरी की सहायता से किताब लाने को मजबूर है।

कहानी आरंभ में ही तस्वीर साफ कर देती है कि सौराज और उसका भाई रूपसिंह प्राथमिक विद्यालय के छात्र हैं, जो पाली मुकीमपुर में है। सौराज पढ़ने में कुशाग्र है और रूपसिंह प्रारंभ से ही पढ़ाई–लिखाई से दूर रहता है। रूपसिंह के पिता भिखारीलाल को प्रधानाचार्य कहते हैं कि "आपका लड़का बुद्धि से बड़ा नहीं है, उम्र से बड़ा है।"[2] क्योंकि सामाजिक मर्यादाएं ही समाज की सुरक्षा, विवाह संस्था और अन्य सुविधाएं देने का वादा करती है। लेकिन सोचने, विचार करने की क्षमता को कुंद भी करती है। भिखारीलाल सामाजिक मर्यादाओं के कारण ही सौराज को पढ़ाना चाहता है। लेकिन वह ये भी अपेक्षा करते हैं कि सौराज मात्र साक्षर बने और रूपसिंह पढ़–लिखकर कलेक्टर जैसे उच्च पदों तक पहुंचे। लेखक लिखते हैं कि "भिखारीलाल अब धर्मसंकट में फंस गए, जिसे पढ़ाना चाहते हैं, वह मास्टर की नजर में न पढ़नेवाला है और जिसे दिखावे के लिए सामाजिक दबाव से बचने के लिए स्कूल भेजते हैं, वह ठीक–ठाक है।"[3] यही घर में झगड़े का कारण बनता है। क्योंकि व्यक्ति की सामाजिक जरूरत पूरा न होने के कारण चिड़चिड़ा हो जाता है और घर पर पशुवत व्यवहार को आतुर रहता है। कई बार पारिवारिक झगड़े स्त्री–पुरूष के बेमेल और वैचारिक भिन्नता की स्थिति में भी पैदा होते हैं और इन सबके बीच घरेलू हिंसा आम बात हो जाती है। सौराज

की मां भी घरेलू हिंसा की शिकार थी। वह परिवार की अर्थव्यवस्था को चलाती है, लेकिन पुरूषवादी समाज में तवज्जो मात्र पुरूष को ही मिलती है। यह ऐसी व्यवस्था है जिसमें निठल्ला पति (पुरूष) भी चौराहे पर बीड़ी–चाय और चिलम पर पूरा दिन बिताता है, लेकिन औपचारिक–अनौपचारिक रूप से स्वयं को मुखिया घोषित किए रहता है। निठल्ले पुरूष के मखिया होने को 'जस्टिफाई' भी तथाकथित प्रगतिशील समाज करता है। स्त्री की स्थिति इस समाज में मात्र कोलहू के बैल की भांति है जिसकी आंख पर सामाजिक मर्यादाओं की पट्टी लगाकर सुबह से शाम तक मजदूरों की भांति घुमाया जाता है। इन सब पर भी "घर का मालिक पुरूष होने के नाते 'मां' को मारता है।"[4] पुरूष का हिंसक रूप कहानी में भिखारीलाल और डालचंद जैसे पात्रों के माध्यम से सामने आया है। "उसकी कमर पर पहला वार भिखारीलाल ने 'फरहे' (वह लकड़ी जिस पर चमड़ा काटा जाता है) से किया था, उसके बाद डालाचंद ने मां के शरीर पर लाठियां बरसाई"[5] सौराज की मां और अनेक औरतें किसी–न–किसी दिन घरेलू हिंसा का दंश झेलने को मजबूर है। अधिकतर महिलाएं 'घरेलू हिंसा' नामक कानून से अनभिज्ञ है और जो इस बारे में जानकारी रखती हैं वे भी "साम–दाम के बाद ही मजबूरी से कोई स्त्री दंड–भेद आजमाती है जब तक पानी सर के ऊपर नहीं आता, कांतासम्मति उपदेशों से काम चलाती है और दो–चार थप्पड़ यों तो ही टेसुए बहाकर भुला देना आम बात है उसकी खातिर"[6] वंचित वर्गों की महिलाओं की स्थिति और भी भयावह है, क्योंकि उनके राजनीतिक–सामाजिक परिवेश की स्थिति कमतर होने के कारण वे महिलाएं उन अधिकारों, समझ, मानवीय मान्यताओं और वैश्विक रिपोर्टस से अनभिज्ञ है जो उनकी भयावह स्थिति को दर्शाती है। बालक सौराज का परिवार आर्थिक सामाजिक तंगी से जुझता है। सामाजिक मर्यादाओं के कारण सौराज अध्ययन में अनेक विपत्तियां खडी की जाती है। उसके पिता उसको समाज को दिखाने हेतु साक्षर करना चाहते हैं लेकिन मेधावी और जिज्ञासु छात्र होने के कारण सौराज पढ़ाई को प्राथमिकता देता है। पिता और परिवार का निरंतर साथ नहीं मिलने के कारण तथा आर्थिक सहायता के अभाव में बालक सौराज ने चोरी मार्ग चुनता है। "खूंटी पर डालचंद का कुर्ता टंगा था, मैंने आगे बढ़कर इधर–उधर देखते हुए चोर की शैली में जेब टटोलना शुरू किया, लटकी हुई जेब में कुछ न था, किंतु खान पर गुप्त जेब बनी हुई थी, उसमें नोट भरे हुए थे, मैंने नोटों की गड्डी को सहज से निकाला और उसमें एक नोट ढूंढा, एक रुपया लेकर बाकी रुपए पूर्ववत जेब में रखकर किवाड़ बंद कर मैं बाहर निकल गया, 'मां' उस समय घर पर नहीं थी।"[8] कहानी चोरी की घटना को सामने रखने का प्रयास मात्र करती है लेकिन पूरी प्रक्रिया का विस्तार से ब्यौरा देने से चूक जाती है। जैसे हमें उचक्का नामक आत्मकथा में देखने को मिलता है, उसमें लक्ष्मण और उनके कुनबे द्वारा धान, गेहूं, गहना चोरी करने की प्रक्रिया को विस्तार से दिखाया गया है क्योकि वंचित वर्ग में समाज विशेष के लोगों द्वारा बेरोजगारी पैदा की जाती है और फिर वह वर्ग किस तरह चोरियों को अंजाम देता है और परिवार का पालन–पोषण करता है इसका पूरा लेखा–झोखा इस आत्मकथा में देखने को मिलता है। यह सब घटनाएँ और प्रक्रिया पाठकों में विश्वास के साथ–साथ उत्सुकता प्रदान करती है। जिससे कथानक में कसावट पैदा होती है।

कहानी में सामाजिक, आर्थिक और घरेलू हिंसा मुख्य बिंदु है। यह कथन आर्थिक बिंदु पर आकर केंद्रित होता है और यहां से अर्थात आर्थिक तंगी से अपराध, घरेलू हिंसा का मार्ग भी प्रशस्त होता है। कहानी दायरे की व्यापक परख करते हुए डालचंद की चोरी, जुआ और गायों की खाल प्राप्ति हेतु गैर–कानूनी गतिविधियों की तह तक को खोजती है लेकिन सिक्के का दूसरा पहलू भी है जो श्रमिक वर्ग की मेहनत और परिश्रम का है जो छोटे लाल और सौराज की मां जैसे पात्रों से खुलता है। छोटे लाल बी.पी. मौर्य (कांग्रेस के नेता) के कारखाने के बेहतरीन श्रमिकों में से एक है। जिनकी समझ और व्यक्तित्व पर शहरीकरण का स्पष्ठ प्रभाव है। वे सौराज

की मां की मेहनत और परिश्रम की कद्र करते हैं और परिवार का स्तंभ भी मानते हैं

— डॉ. गोपाल जीनगर
हिंदी विभाग,
भारती कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली–110007
मोबा. 76108 52801

संदर्भ :

1. सं. राजेंद्र यादव, एक दुनिया सामानांतर, पृ.– 22, (अज्ञेय, शरणार्थी की भूमिका से)
2. सं. रमणिका गुप्ता, दलित कहानी संचयन, पृ.– 72
3. वही, पृ.– 72
4. वही, पृ.– 72
5. वही, पृ.– 75
6. अनामिका, सत्री विमर्श का लोकपक्ष, पृ.– 82
7. जनसत्ता, दिल्ली संस्करण, 4 सितंबर 2020
8. संपा. रमणिका गुप्ता, दलित कहानी संचयन, पृ.– 74
9. संजीव कुमार, हिंदी कहानी की इक्कीसवीं सदी, भूमिका से, पृ.– 6
10. स. रमणिका गुप्ता, दलित कहानी संचयन, पृ.– 72

थारू जनजातीय युवा पीढ़ी में बदलते मूल्यों का समाज शास्त्रीय अध्ययन

— प्रो. मंजु सिंह
— मीनाक्षी सिंह (शोध छात्रा)

सारांश

थारू जनजाति एक समृद्ध इतिहास, संस्कृति और परंपरा वाला समुदाय है। जिसमें युवाओं का एक प्रमुख स्थान है। किन्तु अपने समुदाय में बहुत प्रभावशाली भूमिका निभाते हुए भी यहां के युवा विकास की मुख्य धारा से नहीं जुड़े हैं। अतः इस अध्ययन का उद्देश्य सरकार और अंतर्राष्ट्रीय समुदाय को थारु जनजाति के युवाओं के सामने आने वाली चुनौतियों के बारे में जानकारी देना है। थारु समुदाय के युवा समूह में शिक्षा, प्रौद्योगिकी, आर्थिक, राजनीतिक, पर्यावरण, स्वास्थ्य और सांस्कृतिक गतिविधियों के बारे में जागरूकता के स्तर को जानने के लिए प्राथमिक डेटा एकत्र किया गया है। प्रस्तुत शोध अध्ययन यह इंगित करता है कि जागरूकता, अशिक्षा, प्रवसन, आवागमन की असुविधा तथा आर्थिक स्थिति व संचार की कमी थारू समुदाय के युवाओं की मुख्य समस्याएं हैं। वर्तमान समय में थारू क्षेत्र में बाह्य समाज के हस्तक्षेप के कारण सांस्कृतिक आदान–प्रदान की प्रक्रिया हो रही है। अतः यदि थारू जनजाति को विकसित और वैश्विक समुदाय में एकीकृत करना है तो सरकारी व गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा थारु जनजाति की विभिन्न समस्याओं का निवारण करना आवश्यक है।

बीज शब्द : थारु जनजाति, युवापीढ़ी, जागरूकता, शिक्षा, राजनीति, व्यवसाय आदि ।

प्रस्तावना – थारू समुदाय की अधिकांश जनसंख्या भारत–नेपाल सीमा पर भाभर तराई क्षेत्र में स्थित है। थारू जनजाति का निवास क्षेत्र उत्तर प्रदेश में तराई और भाभर की संकीर्ण पट्टी का प्रदेश है, जो उत्तर प्रदेश और नेपाल की सीमा के साथ उत्तर प्रदेश में स्थित है। थारूओं की अपनी भाषा और सांस्कृतिक मानदंड हैं। इनमें स्थानिक आधार पर पर्याप्त भिन्नता प्राप्त होती है। भारतीय थारू युवा अपने समुदाय की बहुत महत्वपूर्ण शाखा हैं। वे अपने समुदाय में रचनात्मक भूमिका निभा रहे हैं। किन्तु बाह्य समाज से अभी भी उनका सम्पर्क अत्यधिक उन्नत नहीं हो पाया है।

थारु युवाओं मे शिक्षा व व्यवसाय के प्रति जागरूकता

थारू समुदाय उन भारतीय जनजातियों में से एक है जिनमें शिक्षा के प्रति पर्याप्त जागरूकता नहीं है। थारू क्षेत्र में कई शैक्षणिक संस्थान और संगठन हैं, लेकिन शिक्षित लोगों का प्रतिशत बहुत कम है। छात्र जल्दी नौकरी चाहते हैं इसीलिए वे स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा में रुचि नहीं रखते । सामान्य नौकरी के लिए स्नातक स्तर ही आवश्यक होता है इसलिए वे मात्र इसके लिए पात्रता चाहते हैं। पोस्ट ग्रेजुएशन स्तर पर पढ़ने वाले वही छात्र होते हैं जो कोई विशेष नौकरी चाहते हैं या फिर उन्हें अभी तक नौकरी नहीं मिल पाती है। कुछ छात्र डॉक्टरेट की डिग्री के लिए स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा ले रहे हैं लेकिन ऐसे छात्रों की संख्या कम है। वर्तमान समय में भारतीय समाज की यह दुर्दशा है कि प्रत्येक व्यक्ति केवल नौकरी के लिये ही शिक्षा प्राप्त कर रहा है। इसीलिए सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्य अपना महत्व खोते जा रहे हैं। यह एक बड़ा कारक है जो उनके क्षेत्र और सामाजिक मूल्यों को प्रभावित करता है। वर्तमान समय में प्रत्येक थारू छात्र केवल नौकरी के लिए पढ़ाई करता है। अतः रोजगार कारक उनके सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों को प्रभावित कर रहा है क्योंकि वे अपने पारंपरिक व्यवसाय से विमुख होते जा रहे हैं । अध्ययन से ज्ञात होता है कि मात्र 14–25% युवा अपना पैतृक व्यवसाय करना चाहते हैं, और अधिकतम संख्या 75–85% युवा सरकारी या निजी सेवा की नौकरी चाहते हैं। इससे एक उल्लेखनीय तथ्य यह भी पता चलता है कि प्रशासनिक एवं उच्च वर्गीय सेवा की नौकरी के प्रति जागरूकता पर्याप्त नहीं है। सेना और पुलिस बल की नौकरी इस समुदाय में बहुत लोकप्रिय है लेकिन थारु युवा इस क्षेत्र में अधिकारी वर्ग की नौकरी प्राप्त करने का प्रयत्न नहीं कर रहे हैं। वे सिपाही और सिपाही जैसी सामान्य नौकरियों के लिए ही प्रयास कर रहे हैं। छात्रों की संख्या का एक बड़ा हिस्सा (34–35%) किसी भी तरह कोई सेवा वाली नौकरी चाहता है। स्कूल टीचर की नौकरी थारू युवाओं के बीच इसलिए भी लोकप्रिय है क्योंकि स्थानीय इलाकों में इस नौकरी का अवसर आसान है। थारू समुदाय में पुलिस और सेना के जवानों की सामाजिक स्थिति ऊंची और शक्तिशाली मानी जाती है, इसलिए अधिकतर युवा यही काम करना पसंद करते हैं। कृपि थारू जनजाति का मुख्य और पारंपरिक व्यवसाय है लेकिन नवीन युवा पीढ़ी विशेष रूप से उच्च शिक्षित युवा कृषि और उससे संबंधित व्यवसायों में रुचि नहीं रखते हैं।

थारु युवा पीढ़ी के मध्य संचार सुविधाएं व औद्योगीकरण

सरकार ने थारू क्षेत्र में अधिक उद्योग स्थापित किए हैं इसलिए नौकरी के अवसर आसान हैं। औद्योगीकरण थारू समुदाय में सामाजिक सांस्कृतिक परिवर्तन में एक बड़ी भूमिका निभा रहा है क्योंकि इसके कारण वे अन्य समुदायों के संपर्क में आ रहे हैं। यह युग आधुनिक तकनीक और उन्नत संचार का युग है लेकिन थारू युवा इनका उपयोग अपना कैरियर बनाने के लिए नहीं कर रहे हैं। वे मोबाइल फोन, एफएम रेडियो, टेलीविजन और डीवीडी प्लेयर जैसी कुछ तकनीकी सुविधाओं का उपयोग करते हैं लेकिन केवल मनोरंजन के लिए। वे अपने व्यवसाय या अच्छा करियर बनाने के लिए नहीं बने हैं।

थारु समुदाय मे संस्कृतिकरण

थारू समुदाय के पास कई विशिष्टताओं वाली अपनी अद्भुत संस्कृति है, लेकिन अपनी नई पीढ़ियाँ, विशेषकर उच्च शिक्षित युवा इसके बारे में इतने जागरूक नहीं हैं। कुछ थारू अपने सामाजिक–सांस्कृतिक मूल्यों को बनाए रखने की कोशिश कर रहे हैं लेकिन वे आज तक सफल नहीं हुए हैं। बड़ी संख्या में थारू युवा अपने जीवन में बदलाव चाहते हैं, इसलिए वे अपने सांस्कृतिक मूल्यों को अनदेखा कर रहे हैं। वे केवल नई जीवन शैली के लिए अन्य समुदायों का अनुसरण कर रहे हैं। हम कह सकते हैं कि इस समुदाय में संस्कृतिकरण (अन्य संस्कृतियों को स्वीकार करना) की प्रक्रिया अभी भी चल रही है। सबसे अधिक संख्या में थारू युवा अपनी पुरानी संस्कृति को छोड़कर दूसरी संस्कृति को अपनाने का प्रयास कर रहे हैं। इस क्षेत्र में थारूओं के धर्म परिवर्तन के लिए कई धार्मिक मिशनरियां काम कर रही हैं। इसीलिए कुछ थारूओं ने अन्य धर्म अपना लिया है। थारू युवा अपनी संस्कृति की उपेक्षा कर रहे हैं और पारंपरिक मूल्यों को खो रहे हैं।

प्रत्येक वर्ग की विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक स्थितियाँ होती हैं। जागरूकता की विभिन्न स्थिति के यही कारण हैं। ग्रामीण एवं पिछड़े समुदायों में शिक्षा एवं स्वास्थ्य के प्रति अधिक जागरूकता नहीं है। हर वर्ग के पास स्वास्थ्य जागरूकता का अलग–अलग आंकड़ा है। थारू समुदाय भारतीय अनुसूचित जनजाति का एक हिस्सा है लेकिन यह समुदाय अन्य पिछड़ी और अनुसूचित जातियों की तुलना में स्वास्थ्य देखभाल के बारे में अधिक जागरूक है। थारू लोग आमतौर पर शारीरिक रूप से मजबूत होते हैं क्योंकि वे स्वस्थ प्राकृतिक भोजन खाते हैं और उनके पास कई पारंपरिक खाद्य पदार्थ भी होते हैं।

थारु युवाओं मे राजनैतिक जागरूकता–

थारूओं की अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय स्तर की राजनीति में कोई रुचि नहीं होती, लेकिन स्थानीय और क्षेत्रीय स्तर पर कुछ थारू राजनीति में बड़ी भूमिका निभा रहे हैं। थारू समुदाय में नेतृत्व की प्रवृत्ति परंपरागत रूप से आज भी है। अतीत में, पंचायत (स्थानीय थारू परिपद) ग्राम स्तर पर बहुत शक्तिशाली और मजबूत थी । भारत सरकार की नई पंचायती राज (स्थानीय निकाय शासन) प्रणाली को पुरानी पंचायतों से बदल दिया गया है। इस नई पंचायती राज व्यवस्था में थारू युवा बड़ी भूमिका निभा रहे हैं, क्योंकि उन्हें वोट देने का अधिकार है। इसीलिए पुराने प्रकार के नेतृत्व ने अपना मूल्य खो दिया है और युवा नेतृत्व तेजी से विकसित हो रहा है। कुछ थारू राजनीतिक दलों के सक्रिय कार्यकर्ता हैं, विशेषकर युवा जो वहां प्रमुख भूमिका निभाते हैं ।

निष्कर्ष–उपर्युक्त विश्लेपण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि थारू समुदाय सामाजिक परिवर्तन के काल से गुजर रहा है और उनके युवापीढ़ी इस प्रक्रिया में एक बड़ी भूमिका निभा रही हैं। थारू समुदाय सामाजिक बदलावों से जूझ रहा है और उनके युवा इस प्रक्रिया में सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं। युवा कई पुराने सामाजिक नियमों और रीति–रिवाजों का विरोध भी करते हैं। इस युग में नई थारू पीढ़ी कम उम्र में विवाह, वृद्ध लोगों का नेतृत्व और तानाशाही, संयुक्त परिवार प्रणाली, पारंपरिक ठेठ वेशभूपा, बड़ी महिलाओं के साथ विवाह, आदिवासी धार्मिक गतिविधियों आदि का समर्थन नहीं करती है । थारू युवाओं में उच्च शिक्षा के प्रति जागरुकता की कमी है, लेकिन स्थानीय राजनीति में वे सक्रिय हैं । यह सच है कि थारूओं के पास निजी क्षेत्र की सरकारी नौकरियों में उच्च श्रेणी की प्रशासनिक नौकरियाँ नहीं हैं, लेकिन स्थानीय और क्षेत्रीय स्तर पर उनके पास कई राजनीतिक और संवैधानिक पद है। थारू युवा अपनी पारंपरिक व्यवस्थाओं और रीति–रिवाजों की ओर से विमुख हो रहे हैं, अतः थारू संस्कृति की मुख्य पहचान लुप्त होती जा रही है। वर्तमान में थारू युवा अपने अधिकारों और नई पहचान के लिए संघर्ष कर रहे हैं किन्तु वास्तविकता यही है कि उन्हे अपनी अस्मिता बचाए रखने के लिए अपने सामाजिक सांस्कृतिक परंपराओं को बनाए रखना सबसे महत्वपूर्ण है।

– **प्रो. मंजु सिंह,** समाजशास्त्र विभाग
बनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान
– **मीनाक्षी सिंह,** शोध छात्रा
समाजशास्त्र विभाग
बनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान

References :

1. Srivastav SK (1958)- The Tharus : A Study in Culture Dynamics- Agra University Press, Agra, India
2. Verma, Subhash- (2010)- The Eco-friendly Tharu Tribe : A Study in Socio-cultural Dynamics- Journal of Asia Pacific Studies - 1
3. Joshi, Bhanu-Kunduri, Eesha - (2017) - Youth in India : Prospects and Challenges-
4. Brown, A-(2021) - The Role of Education in Empowering Youth
https://www-ijtrs-com/uploaded_paper/ROLE%20OF%20EDUCATION%20IN%20EMPOWERING%20YOUTH%20FOR%20DEVELOPMENT%20OF%20PEACEFUL%20WORLD. pd.
5. Johnson, M. K. Williams, L- S- (2019) - Fostering Resilience and Empowerment in Youth : Strategies for Positive Development- Journal of Youth Studies, 15 (3), 289-305.
6. Roberts, K- L- ¼2016½- EÛploring the Factors Influencing Youth Empowerment Programs: A Case Study.

हम रक्षा करेंगे

✍ डॉ. खन्नाप्रसाद अमीन
Mob: 98249-56947

हम रक्षा करेंगे साथी
मानवता की रक्षा करेंगे
मानवता की रक्षा करना
सामाजिक समानता की सद्भावना फैलाना
है मनुष्य मात्र का श्रेष्ठ कर्म

हम रक्षा करेंगे साथी
वसुधैवकुटुंबकम् के सूत्र की
मानव मानव के बीच
मान- सम्मान हमेशा रखेंगे
भाईचारे के लिए हाथ बढाएगे
मानवता का बड़ा धर्म निभाएंगे
बडे बुजुर्गो और वंचित समाज का
विनम्रता से सम्मान करेंगे
राष्ट्रीय एकता का बीज बोना
है हमारा परम धर्म और कर्म

हम रक्षा करेंगे साथी
मानव के मूलभूत अधिकारों की
सबको मिले समान अधिकार
तो हो जाएगा भारत एक राष्ट्र महान
इससे अच्छा और नहीं कोई बड़ा काम
आओ अब सब एकमेक हो जाए साथी
मानवता का एक और नया पाठ पढे
राष्ट्रहित और मानवता के मूल्यों के लिए
आओ साथी हाथ बढाओ
एक भारत श्रेष्ठ भारत की
परिकल्पना करने को साकार ।।

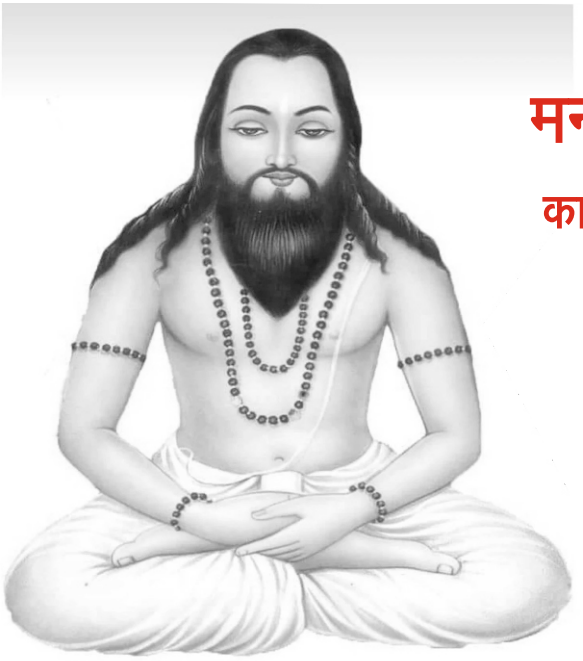

मनखे–मनखे एक समान

का संदेश देने वाले करुणा स्वरूप

गुरु घासीदास जी

की जयंती–पर्व की

हार्दिक शुभकामनाएँ

पंजीयन संख्या
RNI No. MPHIN/2002/9510

डाक पंजीकृत क्रमांक मालवा डिवीजन/204/2024–2026 उज्जैन (म.प्र.)

प्रतिष्ठा में ,

_____

_____

_____

_____

पत्र व्यवहार का पता :
20, बागपुरा, सांवेर रोड,
उज्जैन 456 010 (म.प्र.)

प्रकाशक, मुद्रक **पिंकी सत्यप्रेमी** ने भारती दलित साहित्य अकादमी की ओर से
मालवा ग्राफिक्स , 29, वररुचि मार्ग, गुरुद्वारे के सामने, फ्रीगंज, उज्जैन फोन : 0734–4000030 से मुदित एवं
20, बागपुरा, सांवेर रोड, उज्जैन 456 010 (म.प्र.) फोन : 0734–2518379 से प्रकाशित।

सम्पादक : डॉ. तारा परमार